शुभाशीष

ज्ञान सागर भगवान शिव के विश्व-कल्याणकारी संकल्पों और आदिदेव प्रजापिता ब्रह्मा की अलौकिक मत को सरल रूप में कलमबद्ध कर जन-जन तक पहुँचाने वाली यह ज्ञानामृत पत्रिका ज्ञान-सेवा के 46 वर्ष पूरे कर चुकी है।

सफलता की कहानियाँ, ईश्वरीय ज्ञान का सहज स्पष्टीकरण, योग के नवीन प्रयोग, सद्गुणों की सद्चर्चा, ईश्वरीय सेवा की नवीनतम योजना – इन सबको अपने में समाहित करने वाली इस पत्रिका की पाठक संख्या देश-विदेश में द्रुतगति से बढ़ रही है।

ज्ञानामृत के ज्ञान-बिन्दु, औषधि की चंद बूंदों की तरह जन-जन के कष्ट-क्लेश, तनाव, अशान्ति, रोग, शोक, चिन्ता, अवसाद और विकारों को हरने में समर्थ हैं। इसलिए सर्व राजयोगी भाई-बहनें अथक होकर जन-जन तक इसे पहुँचाकर पीड़ित मानवता पर उपकार की सेवा और भी तीव्रगति से करें, ऐसी मेरी शुभभावना है।

जो भाई-बहनें अमूल्य समय निकालकर, चिन्तन कर इसमें लेख भेजते हैं, जो इसे सुंदर रूप प्रदान करते हैं, जो इसे सर्व तक पहुँचाने की सेवा करते हैं और जो इसका अध्ययन कर अपना व दूसरों का कल्याण करते हैं, वे सब बधाई के पात्र हैं।

वर्ष 2011-12 के उत्साही पाठकों प्रति मेरा यही शुभ संदेश है कि वे अपने स्वभाव-संस्कार को दिव्य बनाकर, एकमत हो, एकता के सूत्र में पिरोए रहें। इंद्रियों को संयमित कर मन जीते जगतजीत बनें। मनसा सेवा द्वारा संसार की दुखी, अभावग्रस्त आत्माओं को सुख-शान्ति, आनन्द, प्रेम की ईश्वरीय किरणें प्रदान कर तृप्ति का अनुभव करायें। 'इच वन टीच फाइव' का लक्ष्य रख एक-एक पाठक पाँच आत्मिक बंधुओं तक ज्ञानामृत का ज्ञान-प्रकाश पहुँचाकर ईश्वरीय सेवा में चार चांद लगाते हुए बापदादा का नाम बाला करे तथा जन-जन की दुआओं का अर्जन करे। बापदादा और हम सबकी यह प्रिय पत्रिका दिनोंदिन उन्नति को प्राप्त करती रहे।

इन्हीं शुभकामनाओं के साथ,
बी.के.जानकी

अमृत-सूची

- कर्म और फल *(सम्पादकीय)*. 4
- प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के .7
- 'पत्र' संपादक के नाम 9
- सकारात्मक सोच से 10
- अन्तिम घड़ी की स्मृति.....11
- जनसंख्या वृद्धि.....14
- योग का प्रयोग 17
- सर्वश्रेष्ठ सत्ता.....18
- हमने जग में..*(कविता)*..... 20
- पुरुषोत्तम संगमयुग.....21
- गरीब कौन? 24
- भ्रष्टाचार से मुक्ति 25
- कमाल बैज की 26
- सुनामी के सन्नाटे में 27
- सचित्र सेवा समाचार 30
- जीवन बदलता है.....32
- मैं कौन हूँ? 33
- तलाश पूरी हुई.....34

सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	80 /-	2,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	80/-	2,000/-
विदेश		
ज्ञानामृत	750 /-	8,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	750/-	8,000/-

शुल्क केवल '**ज्ञानामृत**' अथवा '**द वर्ल्ड रिन्युअल**' के नाम से ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- संपादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन- 307510 (आबू रोड) राजस्थान।**

- शुल्क के लिए सम्पर्क करें - 09414006904, 09414154383

कर्म और फल

(गतांक से आगे..)

कर्म मनुष्य का पीछा करता है। अगला जन्म ले लेने पर भी, पूर्व शरीर और संबंध छोड़ देने पर भी कर्म नहीं छूट जाता। हम जहाँ भी जायें देश में, परदेश में वह साथ चलता है। पुलिस या सरकार के हाथों बच निकलने वाले भी कर्म के पंजे में अवश्य फँसते हैं। भावार्थ यह है कि किये हुए कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है।

सताइये न गरीब को

एक बार शहर के एक नामी चिकित्सक के 18 वर्ष के नौजवान पुत्र की अकालमृत्यु हो गई। समाचार आग की तरह सारे शहर में फैल गया। एक 10 वर्षीय बच्चे ने समाचार सुनकर कहा, अच्छा हुआ। घर के लोग आश्चर्य में पड़ गये कि इस बच्चे के लिए क्या अच्छा हुआ। पूछने पर बच्चे ने बड़ी मार्मिक बात सुनाई, कहा, कुछ दिन पहले मैं इन्ही चिकित्सक साहब से उंगली पर पट्टी बंधवाने गया था तब मैंने गोदी में बीमार बच्चे को लिए हुए एक गरीब गाड़ियालुहार को, वहाँ खड़े देखा। डॉक्टर साहब से उसने बच्चे के लिए दवाई ली थी पर जेब में चार रुपये कम थे। डॉक्टर साहब ने दवाई की शीशी उसके हाथों से छीन ली , वह रुआँसा होकर क्लिनिक से बाहर निकल गया। मेरी जेब में केवल दो रुपये थे, इसलिए चाहते हुए भी मैं उस गरीब की मदद नहीं कर पाया पर मुझे डॉक्टर पर मन ही मन बड़ा क्रोध आया कि क्या यह एक बीमार की सेवा के लिए चार रुपये की मदद नहीं कर सकता, डॉक्टर है या डॉक्टर के वेश में हत्यारा। आज यह समाचार सुनकर वह दृश्य मेरी आँखों के आगे घूम गया और मुख से निकल गया, अच्छा हुआ।

घटना बहुत कुछ कह रही है। लोग दूसरों की मदद करके कहा करते हैं, हमारे बच्चों की सुख-शान्ति और लंबी आयु के लिए दुआ करना, बस इतना ही काफी है। पर आज हम इतने क्रूर हो गये हैं कि ईश्वर का दिया सब कुछ होने पर भी, ज़रूरतमंद के लिए नगण्य-सी मदद करने में भी संकोच करते हैं। इसलिए 'आपके बाल-बच्चे सुखी रहें' जैसी दुआओं से हाथ धो बैठे हैं। जब 'जीवेतशतम्' का आशीष ही नहीं मिला तो आत्मा अकाल ही शरीर का साथ छोड़ देती है। कर्म की गहन गति कहती है, **गरीब की आह और वाह दोनों में बड़ी ताकत होती है।** कहा गया है,

सताइये न गरीब को रो देगा,
सुन ली गर खुदा ने,
जड़ से खो देगा।

कर्म का बोझ बाधक है योग में

कर्म श्रेष्ठ होने पर ही योग या ध्यान हो सकता है। किसी निकृष्ट कर्म का बोझ यदि आत्मा पर है तो वह ध्यान में भी बाधा डालता है। वह कर्म चाहे इस जन्म का हो या पिछले जन्म का। जैन तीर्थंकर महावीर स्वामी की जीवनी में आता है कि वे समाधिस्थ नहीं हो पा रहे थे, उन्होंने ध्यान की गहराई में जाकर महसूस किया कि पूर्वकाल में किया गया कोई कर्म उनकी प्रगति को रोक रहा है। उन्होंने दिल से उस आत्मा का आह्वान किया कि आओ, मुझे दंडित करो। देखते ही देखते एक किसान वहाँ आया, बोला, 'ढोंगी, बैठा-बैठा क्या कर रहा है? मेरे बैल चर रहे हैं, इनका ख्याल रखना।' महावीर जी ध्यान में खो गए और बैल भाग गए। एक लकड़ी लेकर किसान पुन: आया और उसके कान में ठूंस दी। रक्त बह निकला, कर्मभोग कट गया। महावीर जी ध्यानस्थ हो समाधि में चले गये। वैद्यों ने इलाज

किया। शिष्यों ने उस अपराधी व्यक्ति का पता लगाने का प्रयास किया परंतु महावीर जी ने बताया, उसको तो मैंने स्वयं बुलाया था। पिछले जन्म में मैं चक्रवर्ती सम्राट था। संगीत का शौक था। एक सेवक मेरे वीणावादन को रुचि से सुन रहा था। संगीत से ध्यान हटा तो उसे मुग्ध हो सुनते देख दर्प के कारण मुझसे सहन नहीं हुआ और पिघला शीशा उसके कान में डलवा दिया। वह तड़प उठा। उसने मन में वैर की गांठ बांध ली जो मेरे लिए विकर्म का बोझा बन गया। अब वह चुक्ता हो गया है।

उपरोक्त घटना हमें कर्म की गुह्यगति को समझने में मदद कर रही है। किया हुआ पापकर्म या तो भोगकर छूटेगा या उससे कई गुणा पुण्यकर्म करना पड़ेगा या ईश्वरीय स्मृति द्वारा उसे जलाना पड़ेगा। यदि तीनों नहीं हुए तो अंतिम निर्णय के समय धर्मराज से सज़ा खानी पड़ेगी।

कर्म – इस जन्म का है या पूर्व का

कई लोग पूछते हैं, कैसे पता पड़े कि जो कर्मफल हमारे सामने आया है, वो इस जन्म के कर्मों का है या पिछले जन्म के कर्मों का?

एक युक्ति से पहचान सकते हैं। कई कर्म हम इसी जन्म में, किसी विकार के वश होकर करते हैं। उस विकारी कर्म का फल भी हमें इसी जन्म में भोगना पड़ेगा परंतु कई फल हमें, इस जन्म में बिना कुछ किये मिल जाते हैं। कई बच्चे जन्म से शारीरिक रूप से विकलांग या मानसिक रूप से कमज़ोर होते हैं। यह पूर्व कर्मों का फल है। किसी के जन्म के तुरंत बाद उसके माता-पिता की मृत्यु हो गई या कुछ मास या वर्ष की आयु में अपहरण हो गया। ये सब पूर्व कर्मों के फल हैं। उस बच्चे ने अभी तक विकारों के वश तो कुछ किया ही नहीं, फिर उसको इस प्रकार के कष्ट क्यों? अवश्य पिछला उधार साथ लेकर आया है।

श्रेष्ठ कर्मों से प्रकृति भी सेवक

एक बड़े अधिकारी ने अहंकारवश, लापरवाही की और अपने इंकपेन के छींटे सामने बैठे व्यक्ति पर डाल दिये। व्यक्ति की सफेद शर्ट पर नीली बिन्दियों के निशान पड़ गये, वह दुखी तो हुआ पर अधिकारी के सामने बोल कुछ भी ना सका। घटना के तुरंत बाद वह अधिकारी कार्यालय से बाहर निकला। बाहर नीम के पेड़ पर बैठे कबूतर ने भी उसकी शर्ट को ही चुना, वह पीठ पर से गंदी हो गई। अधिकारी ने जैसा किया था वैसा फल तुरंत मिल गया।

कोई कह सकता है, कबूतर का उसने क्या बिगाड़ा, कब बिगाड़ा? इस लंबी चौड़ी-चर्चा में जाने के बजाय हम इतना अवश्य समझ लें कि प्रकृति और इसके प्राणी भी कर्म के धनी व्यक्ति के सेवक और कर्मों के ऋणी व्यक्ति के शत्रु बन जाते हैं। यादगार ग्रंथ रामायण के अनुसार राजा दशरथ ने भी तो लापरवाही, भ्रम या अनुमान के आधार पर तीर मारा था, पर फल तो सामने आया ही। यदि किसी भी विकार के वश होकर कोई भी कर्म करते हैं तो मानो नया हिसाब बनाते हैं या चढ़े हुए बोझ को और बढ़ाते हैं। **इसलिए भगवान कहते हैं, किसी भी दैवी गुण की मनोवृत्ति के आधार पर जो कर्म किये जाते हैं, वे दैवी कर्म या ईश्वरीय कर्म हैं। ऐसे कर्म ही मनइच्छित फल देते हैं और पुराने बोझों को हलका करते हैं।**

धार्मिक व्यक्ति पर कष्ट क्यों?

कई लोग यह सवाल भी पूछते हैं कि धार्मिक व्यक्ति पर भी कष्ट क्यों आता है? धर्म को न मानने वाले, अखाद्य खाने वाले पर कष्ट आये तो कोई आश्चर्य नहीं लगता।

इस बात को समझने के लिए एक तो यह ज्ञान ज़रूरी है कि आज के धार्मिक व्यक्ति के भी पूर्व के संचित पापकर्म हो सकते हैं और आज के

अधार्मिक व्यक्ति के भी पूर्व के संचित पुण्य हो सकते हैं जिनका बुरा या अच्छा फल वे आज प्राप्त कर रहे हैं। दूसरी बात यह है कि धर्म का अर्थ है जीवन में श्रेष्ठ गुणों की धारणा जैसे कि नम्रता, सत्यता, सहनशीलता, पवित्रता, त्याग, दया आदि-आदि। ऐसे धारणामूर्त व्यक्ति के जीवन में यदि कष्ट आ भी जाते हैं तो वह उन्हें शान्तिपूर्वक सहन कर लेगा, उन्हें योगबल से, ज्ञानबल से हँसते-हँसते चुक्ता कर लेगा परंतु श्रेष्ठ गुणों की धारणा से रहित (अधार्मिक) व्यक्ति कष्टों को सामने देख विचलित हो जायेगा, गिड़गिड़ायेगा, दूसरों को या भगवान को भी बुरा-भला कहेगा, अशान्त, दुखी, भारी और तनावग्रस्त रहेगा।

अत: कर्मफल के रूप में कष्ट आने में दोनों प्रकार के व्यक्तियों में अंतर नहीं है। अंतर है दोनों के दृष्टिकोण में। एक को वे पानी पर लकीर के समान अनुभव होते हैं और दूसरे को पत्थर पर लकीर के समान क्योंकि उसका मन उनके प्रभाव तले दब जाता है।

क्या आपने स्वयं को देखा है?

कई कहते हैं, हम देखें तो मानें पर प्रश्न यह है कि आप क्या-क्या देख सकते हैं, क्या स्वयं को देखा है? आत्मा अविनाशी है, उसके द्वारा किया गया कर्म भी अविनाशी है। आत्मा दिखती नहीं है, उसके द्वारा किया जाने वाला कर्म (मूलभूत सोच) भी दिखता नहीं है। कोई भी शरीर, एक जन्म आत्मा के साथ रहता है फिर नष्ट हो जाता है पर आत्मा तो शरीर लेने से पहले भी थी और बाद में भी रहेगी इसलिए उसका हिसाब शरीर के एक जन्म तक सिमटा नहीं रह सकता।

देना सीखें

कोई व्यक्ति यदि पीला कपड़ा पहनकर दुकानदार से उधार लेकर आये और फिर हरा कपड़ा पहन ले तो मात्र वस्त्रों का रंग बदल जाने से वह दूसरा व्यक्ति नहीं बन जाता और उधार चुकाने से बच नहीं सकता। दुकानदार ने उधार कपड़े को थोड़े दिया था। इसी प्रकार यह शरीर भी आत्मा का कपड़ा है, न कि कर्म करने वाला। कर्म करने वाली तो आत्मा है। यह शरीर तो केवल माध्यम बना आत्मा का, कर्म करने के लिए। कर्त्ता-भोक्ता आत्मा है, वह जहाँ जायेगी, कर्म उसका अनुकरण अवश्य करेगा। भगवान कहते हैं, यदि चाहते हो कि बुरे फल ना मिलें तो बुरे बीज बोना छोड़ो, लेने के बजाय देना सीखो। किसी भी चीज़ को जितना ज़ोर से ज़मीन में या आसमान की ओर फेंकते हैं तो वह लौटकर हमारे ही पास आ जाती है। लेकिन अपनी तरफ खींचने का प्रयास करते हैं तो छिटक जाती है। अत: सुखी होना है, कर्मभार से मुक्त होना है तो देना सीखें। खुशी से देना नहीं सीखेंगे तो डॉक्टर को देंगे, वकील को देंगे फिर दुखी भी होना पड़ेगा।

बुरे कर्म होते हैं देह अभिमानवश। देह का अभिमान ही सर्व पापों की जड़ है। इसी से सर्व विकारों की उत्पत्ति होती है। विकारों की उत्पत्ति ही पाप कर्मों का कारण है। जड़ को खत्म करने के लिए आत्म-अभिमानी स्थिति का बार-बार अभ्यास कीजिए और पहले के किये हुए पापकर्म भी फल ना दें, इसके लिए उन्हें भगवान शिव की मीठी याद से जला दीजिए। जले हुए बीज (कर्म) कभी भी फल नहीं देंगे।

– ब्र.कु. आत्म प्रकाश

लक्ष्य प्राप्ति

जैसे पानी में डूबे व्यक्ति को बाहर निकलकर ऑक्सीजन ग्रहण करने की तड़प होती है, लक्ष्य प्राप्ति के लिए भी इसी प्रकार की तड़प अनिवार्य है। लगन की अग्नि, राह में आने वाली सर्व बाधाओं को जलाकर खाक कर देती है। इसलिए कहा जाता है,

जहाँ है लगन,
वहाँ नहीं हैं विघ्न।

प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के

दिव्यबुद्धि के वरदान से विभूषित आदरणीया दादी जानकी जी, हर प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देकर आत्मा को संतोष से भर देती हैं। बुद्धिवानों की बुद्धि बाबा ने उन्हें ऐसी कला प्रदान की है कि वे उलझे कर्मों की गुत्थियाँ सुलझाकर समाधानस्वरूप बना देती हैं। प्रस्तुत हैं भाई-बहनों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के दादी जानकी द्वारा दिये गये उत्तर ... – सम्पादक

प्रश्नः- अभिमान, मोह, लोभ छोड़ने के लिए क्या चिंतन करें?

उत्तरः- आत्मा 63 जन्मों से अभिमानी बन गई है। परमात्मा पिता कहता है, देख तेरे में अभिमान आ गया है। संबंधों का भी अभिमान आता है। उसमें फिर लोभ-मोह भी आ गया है। लोभ-मोह के कारण गुस्सा भी आ गया है। अभिमान के कारण गुस्सा है। थोड़ा भी किसी में गुस्सा है तो समझ जाये, अभिमान के कारण गुस्सा है। अभिमान के कारण संतुष्ट नहीं है। ब्रह्मा बाबा को सामने रखो तो अभिमान छूट जाता है। बच्चा हूँ ना, मेरा बाबा है ना! वो बचपन का सुख अंतिम घड़ी तक रहे, जैसे ब्रह्मा बाबा ने अंतिम घड़ी तक स्मृति में रहने का पार्ट बजाया। **निराकारी स्थिति में रहकर निर्विकारी बन, निरहंकारी रूप दिखाया।** इतना भी कभी अंश मात्र अहंकार वा आवेश में नहीं देखा। अभी अव्यक्त होकर भी सभी को बहुत प्यार करता है, समझानी देता है, पर अंदर कितना शीतल है। बाबा कहता था, बच्चे योगी अर्थात् शीतल काया वाले, अंग-अंग शीतल। चलन से भी शीतलता का अनुभव हो, औरों की तपत बुझाने वाले।

किसी भी कारण से गुस्सा न आवे, आवेश की भी उत्पत्ति हुई तो फेल। योगी शीतल तभी है जब स्वीट साइलेन्स में रहता है। **असली घर हमारा शान्तिधाम है। संगमयुग पर मधुबन, ओमशान्ति भवन है। यहाँ हम सदा मेहमान हैं। अपने को सदा मेहमान समझना महान आत्मा का काम है।** ईश्वर कितना प्यार देता है जो अपनी भी बातें भूल जायें, सारी दुनिया की बातें भूल जायें। इतनी उसकी याद हो जो हमारे सामने जो भी आये, उसको भी बाप की याद दिलायें और कोई तो काम है नहीं। संगमयुगी हैं, संपन्न और संपूर्ण मेरे को बनना है। ये बने, वो बने इसकी चिन्ता भगवान करे, मैं क्यों करूँ।

मैंने बाबा को देखा है, कितना प्यार है, कितनी केयर करता है। अंतिम जन्म में इतनी हमारी संभाल कर रहा है, मेरे बच्चों को कोई तकलीफ न हो। बच्चे कहते हैं, मेरा बाबा! मैं कहता हूँ, मेरे बच्चे! अंतिम घड़ी तक मैं इनके साथ रहूँगा। वो चाहता है, मेरे साथ रहो। मैं आया ही इसलिए हूँ कि तुम मेरे साथ रहो।

मोह की रगें टूट जानी चाहिएँ। देह में भी मोह न हो, संबंधियों में भी न हो। धन भी मैं क्या करेंगी। खिलाने वाला बाबा बैठा है। जिस तन को बाबा खिला रहा है, सेवा में भी लगा रहा है। इस तन द्वारा सेवा हो रही है ना! देता भी बहुत कुछ है, तुम खुशी में आकर सेवा करते हो। धन से भी करते हो तो तन से भी करते हो। इतनी खुश रहने की शक्ति दी है, जिनमें कमी या कमज़ोरी है वो खुश नहीं रहते हैं।

थोड़ा बहुत हिसाब-किताब क्या बड़ी बात है! बड़ा भी होवे तो कुछ

नहीं है। बाबा हमारा सबसे बड़ा सर्जन भी है तो साजन भी है, वो संभालता है। हर संबंध का सुख देने वाला माता है, पिता है, पति है, सखा है..। मुख्य बात है उसकी शिक्षायें बड़ी अच्छी लगती हैं तभी माँ-बाप के रूप में प्यार करता है।

भले कोई मेरी बात को स्वीकार न करता हो, किसके सामने अच्छा खाना रखो, पर उल्टी का ख्याल आ रहा है, सिर में दर्द है तो खाना छोड़ देगा ना, इसमें उसका क्या दोष है। हम क्यों कहें कि यह अस्वीकार करता है। अभिमान की अति सूक्ष्म बातें ऐसी हैं जो मीठा बनने का लक्ष्य ही नहीं है। जैसे बाबा की मुसकराहट में ही सब खुश हो जाते हैं, ऐसी याद और मुसकराहट हो। जब मेरे को खुशी का अनुभव है तो मेरे को देख और खुश हो जावें। जिसको जितना अनुभव है, उसी अनुसार चल रहा है। तो क्यों नहीं अनुभव को बढ़ायें। थोड़ा भी अभिमान दुश्मन है। भगवान जो वरदान देता है वो काम नहीं करेगा। थोड़ा मान लेकर खुश हो गया तो भगवान फ्री हो गया, कहेगा, यह तो इसमें ही खुश हो गया। अरे अभिमान सबसे बड़ा दुश्मन है इसलिए बाबा कहता है, आत्मा समझ कर मुझे याद करो। देह द्वारा निमित्त सेवा कराके ऊँचे से ऊँचा भाग्य बनाने का भाग्य देता है। आत्मा भाग्यवान बन रही है। ऐसी बातें जो दिल को लगती हैं वो दिल में हों। बाकी दिल सदा साफ, सच्ची दिल से साहेब को राजी रखो। तो कभी नाराज नहीं होंगे, न किसी को नाराज़ करेंगे। बोलचाल में अभिमान असुल न हो, यह ध्यान बाबा का सच्चा बच्चा बहुत रखता है। जो चाहिए वो आपेही मिलता है। मांगना नहीं पड़ता है। सब सहज हो रहा है, बाबा आपे ही प्रेरणा देता है, आपेही सेवा का आफर करता है। बाबा ने केवल शांत रहना सिखाया है।

प्रश्नः- आपने इतना अच्छा जीवन कैसे बनाया?

उत्तरः- लक्ष्य है कि मैं एक्जाम्पुल बनूँ क्योंकि बनाने वाला इतना अच्छा है, सर्व सम्बन्धों से साथ दे करके अपने समान बना रहा है, तो प्रैक्टिकली मेरी लाइफ से कोई की लाइफ बन जाये। इसमें स्टूडेन्ट हूँ तो मज़ा है। स्टूडेन्ट को रोज़ाना जो शिक्षा मिलती है उसे जीवन में पूरा लाना अच्छा लगता है। उसके लिए बाबा कहते, अपना चार्ट देखो, मेरे में सर्वगुण कहाँ तक आये हैं? अन्दर में कोई अवगुण तो नहीं रह गया है? **अपने गुण, चरित्र पर ध्यान रखेंगे तो बाबा खुश हो जायेगा। जिस भी सेवा अर्थ होंगे वो भी सहज हो जायेगी।** गुण सिखाये नहीं जाते, संग से सीख लेते हैं, अनुभव यह कहता है।

प्रश्नः- स्थिर मन और बदलता मन कैसे पहचानें?

उत्तरः- दिल सच्ची है यह भाग्य है। मन बेइमानी नहीं करता। नहीं तो अभी-अभी अच्छा करने का ख्याल आयेगा, फिर बदल जायेगा। **जो करना है अब कर लो। बाद में क्या हो, किसने देखा है! मन बदल सकता है, परिस्थितियाँ बदल सकती हैं।** अगर मन बदली होता है तो समथिंग इज़ रांग। महसूस भी नहीं होगा कि रांग है। मन कभी ऐसा, कभी वैसा तो राज्यपद के अधिकारी नहीं बन सकते, विश्वास के पात्र नहीं बन सकते। बाबा परीक्षा लेते थे, कहते थे, अभी यह कहता है, अभी बदल जायेगा। भगवान का मेरे में विश्वास हो, कुछ भी हो जाये, बच्चा बदलने वाला नहीं है। भगवान को मेरे में ट्रस्ट है? कितनी भी परीक्षा आये, बदलूँगा नहीं। दिल साफ है तो बुद्धि की लाइन क्लीयर रहती है, सच्चे दिल वाला खींचता है। तन-मन साफ हों, कितनी शोभा है। लक्ष्य है सफाई और सादगी का, एक्स्ट्रा है तो दे दो। खराब है तो फैंक दो। दिल सच्चा है तो बाबा को इतना विश्वास है, जहाँ जायेगा अच्छा कार्य हो जायेगा। ❖

'पत्र' संपादक के नाम

नवंबर 2010 अंक में 'ब्रह्माकुमारी ऊषा जी के साथ पवित्रता संपन्न जीवन की दास्तान' लेख बहुत अच्छा लगा। पढ़कर दिल भर आया। दिल में आया कि कितने अच्छे-अच्छे बाबा के रत्न हैं, कितना पुरुषार्थ है! पति-पत्नी में कितना नि:स्वार्थ स्नेह! आजकल देखने में तो क्या, सुनने में भी नहीं आता। दिल में आया कि अच्छा संग मिलने के लिए भी भाग्य चाहिए। इन्हों को वह भाग्य मिला। रमेश भाई को भी धन्यवाद जो उन्होंने अपना अनुभव सबमें बाँटा। ऐसी आदरणीया ऊषा बहन को दिल बार-बार कोटि-कोटि प्रणाम करता है। आदर सहित उनको प्रेम से श्रद्धांजलि! इस अंक में अन्य भी कई लेख 'जीभ पर बंधन', 'गृहस्थ में रहते मुक्ति का मर्म', 'भगवान का आदेश अंतिम सत्य', 'चश्मा पहनो, चमत्कार देखो' तथा 'क्रोध पर विजय' भी अच्छे हैं। सभी लेखक भाई-बहनों को धन्यवाद!

– ब्र.कु. कुमुद, संगमनेर

अक्टूबर 2010 अंक में 'संजय की कलम से' में कुंभकरण का परिचय कराया, परिचय क्या हुआ, लगा जैसे भीमकाय शरीरधारी से साक्षात्कार हो रहा है। चेष्टाहीन, बुद्धिहीन, आलसी, निद्राप्रिय, रुलाने वाले का भाई जिसके प्रभाव से कई महावीर परास्त हो गये। घबराहट होना स्वाभाविक था क्योंकि वह अभी जीवित है। उसको अंदर-बाहर देखा, ढूँढा, नहीं मिला। मन को टटोला तो अपने ही भीतर, ज्ञानामृत के भय से दुबका मिला।

संजय की कलम ने कर दिया कमाल
मानव होने का अर्थ समझ ले,
मचा चुका तू खूब धमाल।
संजय भैया की कलम कहे,
तू कर ज्ञानामृत का पान
दैव जगेंगे, असुर भगेंगे,
नवजीवन का बाबा दे देंगे वरदान।

ज्ञानामृत में प्रकाशित सभी लेख, मननीय, दुष्वृत्तियों से बचाने में सहायक हैं। लेखक महानुभावों को प्रणाम! ये लेख जहाँ आत्मप्रवंचना से बचाते हैं, वहीं दोषों के परिमार्जन में भी सहायक होते हैं।

– मोहनलाल धाभाई,
मौखमपुरा, दूदू

दिसंबर 2010 अंक में 'भूत को भूलिए' संपादकीय लेख पढ़कर व्यर्थ संकल्प और भूतों (भूतकाल के व्यर्थ विचारों) को भगाने का महामंत्र मिला। लेख में व्यापारी का दृष्टांत जीवन में धारण करने योग्य है जिसमें कहा गया है कि स्मृति के काउंटर पर वर्तमान को सजाकर रखो जिससे जीवन में हर पल, हर कदम में सफलता मिले। यही 'सफल' जीवन का महामंत्र है।

वर्तमान और भविष्य के सफर को
अगर बनाना है अमर,
तो ज्ञानामृत के माध्यम से ज्ञान की
एक-एक बूँद को करो धारण।

– ब्र.कु.पंकज, आकोट

सितंबर 2010 अंक में 'भगवान पुत्र रूप में' पढ़कर दिल-दिमाग में यही संकल्प आ रहा था कि हम भी ज़रूर ऐसे किसी संबंध का अनुभव बाबा द्वारा करें। इतना अच्छा अनुभव, इतना अच्छा लेख पढ़कर तो जीवन को पलट डालने का दृढ़ संकल्प आता है।

– ब्र.कु. ज्ञानिक भाई, संबलपुर

मार्च 2011 के अंक में 'कैदी है तन, आजाद है मन' यह सुंदर और अप्रतिम दर्जे का लेख पढ़ा जिससे बहुत प्रभावित हुआ। इंसान गलती कर बैठता है, जब सज़ा भुगतनी पड़ती है तब पश्चाताप होता है। शिवबाबा के चमत्कारिक ज्ञान द्वारा कैदियों के भी जीवन में खुशी की बहार आ जाती है।

– लालाजी भाई गोवेकर, मेहकर

सकारात्मक सोच से सकारात्मक बोल

● ब्रह्माकुमार गौरव कुमार, पंचकूला

सकारात्मक सोच को अपनाना एक ऐसी कला को जीवन में लाना है जो जीवन में संतुष्टता व खुशी सहज ही भर देती है। सकारात्मक सोच के साथ सकारात्मक बोल भी जीवन में अहम भूमिका अदा करते हैं। ये दोनों हमारे आभामण्डल को शक्तिशाली व ऊर्जावान बनाते हैं। सकारात्मक बोल को स्पष्ट करने वाला उदाहरण देखिए –

कोई बच्चा यदि झूठ बोलता हो तो उसकी इस आदत को छुड़ाने के लिए कहा जाता है, 'झूठ नहीं बोलना चाहिए' या 'सदा सच बोलना चाहिए।' यदि 'झूठ नहीं बोलना चाहिए' का प्रयोग करते हैं तो इस पंक्ति के हर शब्द का उस बच्चे (तथा खुद बोलने वाले) के चेतन मन पर एक दृश्य बनता है परंतु 'नहीं' शब्द का दृश्य नहीं बनता। मनोवैज्ञानिक तथ्यों के अनुसार, 'नहीं' शब्द के अलावा हर शब्द का दृश्य हमारे चेतन मन पर बनता है। अब यदि इस लाइन में से 'नहीं' शब्द को निकाल दिया जाये तो 'झूठ बोलना चाहिए' का दृश्य उस बच्चे व बोलने (समझाने) वाले के चेतन मन पर बनेगा जो दोनों के लिए अत्यंत हानिकारक है। तो सकारात्मक बोल यानि कि 'सदा सत्य बोलना चाहिए' ही उपयुक्त वाक्य है।

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम सकारात्मक सोच और बोल का पक्ष लेते हुए कहते हैं कि जब वे छोटे थे तो एक पेड़ की एक ऊंची टहनी पर चढ़कर बैठ गये और नीचे की टहनी पर उनकी चचेरी बहन बैठ गई। तभी कुछ देर में तेज हवा का झोंका आया। अब्दुल कलाम जी के पिताजी ने कहा कि 'बेटे, ज़ोर से पकड़े रहना' और उनकी चचेरी बहन की माता ने कहा कि 'बेटी, छोड़ना नहीं' इस बाद वाली लाइन में 'नहीं' शब्द को छोड़ बाकी शब्दों का दृश्य चेतन मन पर इस प्रकार बना कि 'बेटी छोड़ना', इस कारण से बच्ची के हाथ से वह डाली छूट गई और वह गिर गई।

अत: नकारात्मक शब्दावली यानि 'नहीं' शब्द का प्रयोग कम करके हम बहुत-सी शिक्षायें जीवन में सहज ही धारण कर सकते हैं।

नकारात्मक बोल	दृश्य चेतन मन पर	सकारात्मक बोल
1. मैं फेल न हो जाऊँ	मैं फेल हो जाऊँ	मुझे पास होना है
2. मैं हार न जाऊँ	मैं हार जाऊँ	मुझे जीतना है
3. शोर मत कर	शोर कर	शांत रहो
4. क्रोध मत करो	क्रोध करो	प्यार से बात करो
5. टेन्शन नहीं करो	टेन्शन करो	सहज रहो

मनोवैज्ञानिक तथ्य

मनोवैज्ञानिक शोध में यह पाया गया है कि हमें दुख, चिंता, परेशानी, रुकावट, खराबी, समस्या, बेकार आदि नकारात्मक शब्दों का प्रयोग अपनी शब्दावली से पूर्ण समाप्त कर देना चाहिए क्योंकि जितना-जितना हम इन नकारात्मक शब्दों का प्रयोग करते हैं, उतने ये जीवन में अधिक आते हैं। एक परेशान व दुखी व्यक्ति कभी यह न कहे कि 'मैं परेशान हूँ या दुखी हूँ' क्योंकि जितना इन शब्दों का प्रयोग करेगा उतनी परेशानी व दुख जीवन में आयेंगे। इसलिए हमेशा सुख, खुशी, सहज, अच्छा जैसे सकारात्मक शब्दों का ही प्रयोग करें।

छोड़ने का नहीं, धारण करने का संकल्प करें

सकारात्मक बोल की अंतिम मंज़िल पर पहुँचने के लिए यह ज़रूरी है

(शेष..पृष्ठ 13 पर)

अन्तिम घड़ी की स्मृति

● ब्रह्माकुमार विनायक, आबू पर्वत

पुरुषार्थ करते-करते कई बार साधक के मन पर असंतुष्टता और निराशा आक्रमण कर लेते हैं, इसका कारण क्या है?

कई पुरुषार्थियों के मन के भाव को जानने के बाद कारण का पता चला कि जिस आसुरी संस्कार का परिवर्तन करने के लिए पुरुषार्थ कर रहे हैं, उसमें सफलता दिखाई नहीं देती। बाह्य रूप से तो कुछ परिवर्तन है परंतु दृष्टि-वृत्ति में अपवित्रता, अभिमान-अपमान और टकराव की भावना, स्वयं की प्रशंसा की इच्छा, ईर्ष्या-द्वेष, व्यक्ति-वस्तु-वैभव की तरफ लगाव-झुकाव – इनमें परिवर्तन तृप्तिदायक नहीं है।

राजयोगी की शोभा है संस्कार परिवर्तन में

जैसे स्त्री की शोभा उस के पातिव्रत्य में समाई हुई है, वैज्ञानिक की शोभा उसके आविष्कारों से बढ़ जाती है, वैसे ही एक सहज राजयोगी की शोभा उसके संस्कार परिवर्तन से दिखाई देती है। यह परिवर्तन ही भगवान को इस धरती पर प्रत्यक्ष करने और भविष्य में ऊंच पद पाने का एकमात्र उपाय है। यदि यह परिवर्तन, पुरुषार्थ करने के बावजूद भी महसूस न हो और सेवाक्षेत्र में, संबंध-संपर्क में वही भयानक पुराना संस्कार ज़हरीले सांप की तरह अपना फन दिखाकर 'अभी तक मैं हूँ' कहकर परेशान करे तो ये बातें असंतुष्टता के मुख्य कारण हैं।

परिवर्तन में विलंब क्यों?

इस संबंध में चर्चा की गई तो अलग-अलग प्रकार की राय निकली जैसेकि योगाभ्यास की विधि सही नहीं होगी, उसे ठीक करें या कोई गुप्त पापकर्म हो रहा होगा, उसकी जांच करें आदि-आदि। परंतु प्रश्न फिर से यह उठा कि पाप करना तो हमने संपूर्ण रीति से रोक लिया है और योग की विधि जिसमें स्वयं को आत्मा बिंदी समझकर ज्योतिबिंदु परमपिता शिव को ज्योतिलोक या परमधाम में याद करना होता है, यह अभ्यास हम करते हैं। फिर भी परिवर्तन में विलंब क्यों?

चाहिए ज्वालास्वरूप योगाग्नि

इस बात का हल करने के लिए हम उदाहरण लेंगे। किसी भी धातु को अगर पिघलाना है तो विज्ञान में यह विधि बताई गई है कि उस धातु पर आग का प्रयोग करो। अब हम एक मोमबत्ती जलाकर उस पर एक लोहे का सरिया लटकायेंगे ताकि उसकी उष्णता से सरिया पिघल जाये। एक घंटा हुआ, दो, तीन..छह घंटे..एक दिन भी बीत गया लेकिन सरिया पिघलने का कोई लक्षण नहीं। विधि सही रहते हुए भी सफलता क्यों नहीं मिली या विज्ञान झूठ कहता है? नहीं, हमने विधि को तो अपनाया परंतु एक अति आवश्यक बात को ध्यान में ही नहीं लाया कि लोहे को पिघलाने के लिए उष्णता का आवश्यक तापमान है 1665 डि.सें.। हरेक धातु का अपना-अपना द्रवण बिंदु होता है और उसको पिघलाने के लिए उतने ही तापमान की अग्नि चाहिए। जब तक अग्नि में वह तापमान नहीं तब तक धातु का घनरूप से द्रवरूप में परिवर्तित होना असंभव है। इसी प्रकार, 63 जन्मों से काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार जैसे विकारों के प्रभाव में आकर बांधी गई पापकर्मों की गठरी को उतारने के लिए भी अति प्रज्वलित योग अग्नि चाहिए। इसको ही कहा जाता है ज्वाला स्वरूप अवस्था। विधि सही रहते हुए भी परिवर्तन न दिखाई देने का कारण यही है कि योगाग्नि दीपक के मुआफिक है, न कि ज्वाला स्वरूप।

प्रज्वलता कैसे बढ़ायें?

प्रज्वलता बढ़ाने का साधन है एकाग्रता। एकाग्रता अर्थात् कार्य के आरंभ से लेकर, सफलता मिलने तक मन, बुद्धि, दिल और शरीर इन चारों की सम्मिलित क्रियाशीलता। जैसे आवर्द्धक (Lens) से एकत्रित की गई प्रकाश की किरणें, निशान को भस्म कर देती हैं वैसे ही इन चारों बातों में एकाग्र की हुई योग की अवस्था पाप की गठरी को भस्म कर देती है। हमेशा तपस्या के पहले कठिन शब्द जोड़ा जाता है। कठिन तपस्या का अर्थ 'कष्टकर' नहीं बल्कि कष्ट, परिस्थिति में भी न टूटने वाली हीरे जैसी कठोर एकाग्रता से संपन्न तपस्या। जैसे महाभारत में लिखा गया है कि अर्जुन ने द्रोणाचार्य को कहा कि मुझे पंछी के अलावा दूसरा कुछ भी दिखाई नहीं देता है वैसे ही हमारा बुद्धि रूपी नेत्र एक ज्योतिबिन्दु परमात्मा शिव के अलावा अन्य व्यक्ति, वस्तु और वैभव में न डूबे, यह है एकाग्रता। एकाग्रता को निरंतर शक्तिशाली रखना ही योगाग्नि को निरंतर प्रज्वलित रखने का उपाय है।

एकाग्रता को कैसे अपनाएँ?

जैसे बीज को अंकुरित होने के लिए जल, प्रकाश और मिट्टी की आवश्यकता है, वैसे ही एकाग्रता की उत्पत्ति के लिए भी तीन घटकों की ज़रूरत है। पहला है, लक्ष्य पर पहुंचने का दृढ़ संकल्प, दूसरा है, लक्ष्य से विमुख करने वाली बातों से वैराग, तीसरा है, विस्तार को सार रूप में समेटने की शक्ति। ये तीनों बातें एक व्यक्ति के अंदर एक ही समय में धारण हो जाएँ, उसके लिए क्या पुरुषार्थ करें, वह हम उदाहरण से समझेंगे।

मृत्यु की स्मृति से आ गई शक्ति

एक व्यक्ति दिन का बहुभाग अपने कार्य-व्यवहार में और बचा हुआ समय खेल-पाल, मनोरंजन में व्यतीत करता है। उस पर कई ज़िम्मेदारियाँ भी हैं, खेती बेचकर घर खरीदना है, बच्चों को नौकरी दिलवानी है, कई चीज़ें खरीदनी हैं परंतु कार्य-व्यवहार से मन-बुद्धि हटाकर वह इन पर एकाग्र नहीं हो पा रहा है। सिर्फ सोच रहा है कि कर लेंगे, आज नहीं तो कल हो जायेगा। एक दिन ऐसा आया, पता चला कि उसे कैंसर की बीमारी लग चुकी है। वह भी आखिरी स्तर पर पहुंच गई है और वह कुछ ही दिनों का मेहमान है। यह सुनकर घर पहुंचते ही वह जिन्न के मुआफिक काम करने लग गया और एक मास के अंदर ही खेती भी बेच दी, नया घर भी खरीदा, बच्चों को नौकरी भी दिलवायी और भी बहुत कुछ कर डाला। आश्चर्य की बात है, जो काम कई सालों से कर नहीं पा रहा था वे कुछ दिनों में ही पूर्ण कर डाले, यह कैसे हो सका? इतनी समर्थी, एकाग्रता आई कहाँ से?

हर घड़ी को अंतिम घड़ी समझो

वह महान शक्ति थी अंतिम घड़ी की स्मृति की या मौत की स्मृति की जो हर पल उसके सामने प्रत्यक्ष हो उठी। निरंतर उसके कानों में ये शब्द गूंजने लगे कि जो कुछ करना है, अभी ही कर लें, अब नहीं तो कब नहीं।

इस स्मृति ने सर्व बातों से वैराग भी उत्पन्न कराया, ज़िम्मेवारी पूर्ण करने की दृढ़ता भी भरी और लक्ष्य के अलावा बाकी सब बातों को समेटने की शक्ति भी प्रदान की। इसका परिणाम? एकाग्रता का उदय जो सफलता या परिवर्तन की नींव है। **हमारे लिए भी ज्वालारूप की तपस्या के लिए जरूरी साधन है अंतिम घड़ी की स्मृति। मातेश्वरी जगदंबा सरस्वती जी, जिन्होंने पुरुषार्थ और प्रालब्ध दोनों बातों में प्रथमांक लेकर श्रीलक्ष्मी का पद प्राप्त किया, का घोषणा-वाक्य था, 'हर घड़ी को अंतिम घड़ी**

समझो।' कालों के काल महाकाल शिवपिता ने इस बात की स्पष्ट चेतावनी दे दी है कि कब और कहाँ भी, किसी का भी अंतिम काल हो सकता है।

मृत्युशैया पर जागृत हो जाते हैं पश्चाताप और क्षमाभाव

मनोरोग चिकित्सालयों में भ्रमाधीन व्यक्ति को वास्तविक स्थिति में लाने के लिए विद्युत चिकित्सा देनी पड़ती है। वैसे ही अंतिम घड़ी की स्मृति भी मन-बुद्धि रूपी नेत्र के सामने से भ्रामक आकर्षणों का पर्दा हटाकर इस वास्तविकता की महसूसता कराती है कि अब तक कितना पुरुषार्थ किया है और मंज़िल पर पहुंचने के लिए पुरुषार्थ की गति में कितनी तीव्रता और अपनानी है। मनुष्य की सफलता के पीछे कोई न कोई चालक शक्ति (Motivation) रहती है। अलेक्जेन्डर हरेक युद्ध में विजय पाता था क्योंकि उसकी चालक शक्ति थी 'मैं पूरे विश्व को जीतूँ' वैसे ही अंतिम घड़ी की स्मृति भी **'कर या मर'** का चुनाव हमारे सामने रखकर विजय पाने की अनिवार्यता की महसूसता करायेगी। जब मनुष्य मृत्यु-शैय्या पर रहता है तब उसके अंदर पश्चाताप और क्षमाभाव अपने आप जाग्रत होते हैं। जिंदगी भर के वैर-विरोध, मन-मुटाव सब भूलकर क्षमा-याचना करेगा और क्षमादान दे भी देगा। तो मृत्यु की स्मृति में रहना अर्थात् लगाव-झुकाव या टकराव से मुक्त, प्रेम और क्षमाभाव से भरपूर रहना।

सृष्टिनाटक में हमें मिलने वाले सर्वखजानों में सबसे अमूल्य खजाना है समय। इस खजाने के हर क्षण की कीमत को वही अच्छी तरह जान सकता है जिसे हर कदम में मौत की स्मृति है। यह सिद्ध है कि हम सबको यह शरीर छोड़ना ही है और वह घड़ी कभी भी आ सकती है। **ऐसा न हो कि स्वयं भगवान द्वारा चुने जाने के बाद भी पश्चाताप की अग्नि में जलते हुए और खून के आँसू बहाते हुए अंतिम श्वास छोड़ना पड़े।**

इसलिए हम सब हर कदम में अपनी अंतिम घड़ी और 'अब नहीं तो कब नहीं' इस पाठ की स्मृति में रहते हुए एकाग्रता की शक्ति को जाग्रत करके, योग की ज्वाला को प्रज्वलित करेंगे और उसके द्वारा स्वयं को शीघ्रातिशीघ्र ही परिवर्तन कर, स्वयं के द्वारा वरदाता शिवपिता को विश्व में प्रत्यक्ष करेंगे। ❖

सकारात्मक सोच से..पृष्ठ 10 का शेष

कि हम काम, क्रोध, लोभ..आदि विकारों का प्रयोग अपनी वाणी में न करके इन विकारों के विपरीत जो गुण हैं, उनका प्रयोग अधिक से अधिक करें। उदाहरण के लिए, मान लीजिए, हम लोभ छोड़ना चाहते हैं और बार-बार यही चिंतन कर रहे हैं कि 'लोभ छोड़ना है, लोभ को जीवन से बाहर निकालना है' तो यह धारणा पूर्ण रूप से जीवन में नहीं आयेगी। इसके विपरीत यह वाक्य, 'मुझे संतुष्ट बनना है, मैं बाबा की संतुष्टमणि हूँ' सहज ही मन में संतुष्टता भर देगा और लोभ हमेशा के लिए हमारा दामन छोड़ देगा। अत: काम की जगह पवित्रता का, क्रोध की जगह शान्ति का, मोह की जगह आत्मिक प्रेम का, अहंकार की जगह नम्रता का और आलस्य की जगह उमंग का चिन्तन करें।

कहा जाता है कि यदि कमरे में अंधेरा है तो उसे बाहर निकालने के लिए प्रकाश चाहिए, उसी तरह अवगुण निकालने के लिए गुण की ही आवश्यकता है। हम जितना-जितना गुणों का मन में चिंतन व वाणी में प्रयोग करेंगे, उतने-उतने गुण हमारे जीवन में सहज ही आते रहेंगे। ❖

विश्व जनसंख्या दिवस पर विशेष..

जनसंख्या वृद्धि : एक विवेचना

● ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

वर्तमान समय संपूर्ण विश्व के सामने और विशेष रूप से भारत के समक्ष अनेकानेक समस्याओं का जमघट-सा लगा है। समस्यायें तो समस्यायें हैं और कोई भी समस्या अपने हानिकर प्रभाव डालने में दूसरी से कम नहीं है। जैसे रोग तो रोग ही होता है चाहे शरीर में कहीं भी हो और किसी भी रोग के बने रहने की पैरवी हममें से कोई भी नहीं कर सकता। परंतु जैसे आयुर्वेद यह मानता है कि सभी बीमारियों की जड़ वात, पित्त और कफ होता है इसी प्रकार सभी समस्याओं के कारणों और निवारणों पर समग्र दृष्टि डालने पर हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सभी समस्याओं की जनक या मूल समस्या है जनसंख्या की भयावह वृद्धि। हम अपने इस कथन की पुष्टि के लिए कुछ तथ्य प्रस्तुत कर रहे हैं

विश्व तथा भारत की जनसंख्या में भयावह वृद्धि

समाजशास्त्रियों तथा इतिहासकारों के अनुसार ईसा के समय विश्व की कुल जनसंख्या 30 करोड़ थी। ईसा के 1750 वर्ष बाद जनसंख्या लगभग ढाई गुणी अर्थात् 75 करोड़ हुई। इसके बाद से अब तक चक्रवृद्धि गणित के क्रम से जनसंख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। सन् 1850 में आबादी 110 करोड़ हुई, 1900 में 160 करोड़, 1920 में 181 करोड़ 91 लाख, 1940 में 224 करोड़, 1960 में 306 करोड़, 1980 में 412 करोड़, 1990 में 527 करोड़, 2000 में 698 करोड़ तथा 2010 में 684 करोड़। यह तो हमने विश्व जनसंख्या वृद्धि के आंकड़े देखे, अब एक नज़र भारत की आबादी की स्थिति पर भी डालें।

आज हम भारतवासी 1 अरब 21 करोड़ हो गये हैं। भारत में प्रतिदिन 42 हजार बच्चे जन्म लेते हैं जबकि पूरी दुनिया में यह संख्या 71 हजार है। दुनिया के 60 बच्चे अकेले भारत में ही पैदा होते हैं। यहाँ प्रतिवर्ष 1 करोड़ 53 लाख नए व्यक्ति जन्मते हैं। हर सेकंड में दो बच्चों का जन्म होता है। इसी दर से जनसंख्या वृद्धि होती रही तो जनसंख्याविदों का मानना है कि 2045 तक भारत, चीन को पीछे छोड़कर सबसे अधिक आबादी वाला देश होगा। बीसवीं शताब्दी में विश्व की जनसंख्या चार गुना बढ़ी परंतु भारत की पाँच गुना बढ़ गई। भारत में 1981 से 1996 तक केवल 15 वर्षों में कुल 25 करोड़ जनसंख्या बढ़ी। यह बढ़ोतरी अमेरिका की आबादी से ज्यादा है। संयुक्त राष्ट्र के आंकड़ों के मुताबिक पैदा होने वाले बच्चों में 23 बच्चे, 15 से 19 वर्ष की आयु की महिलाओं के होते हैं। भारत में दो बच्चों के जन्म के बीच अंतर भी अन्य देशों की तुलना में काफी कम है जिसके कारण महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ रहा है। दो बच्चों के जन्म के बीच कम से कम 32 माह का अंतर होना आवश्यक है परंतु भारत में 12.5 बच्चों के बीच मात्र डेढ़ साल और 27 बच्चों के बीच दो वर्ष का अंतर है। सन् 1971 में प्रति हज़ार में 52 बच्चों की मृत्यु जन्म के समय हो जाती थी जो अब घटकर 23 हो गई है। उच्च प्रजनन दर में उत्तरप्रदेश पहले नंबर पर, बिहार दूसरे नंबर पर और राजस्थान तीसरे नंबर पर है।

यदि जनसंख्या पर नियंत्रण करना है तो न केवल सख्त कानून बनाने होंगे वरन् उनकी परिपालना में भी सख्ती बरतनी होगी, नहीं तो वह दिन दूर नहीं जब हम तिल-तिल कर मरने को विवश होंगे।

यह भी एक कटु सत्य है कि 90 जनसंख्या वृद्धि विकासशील देशों में होती है परंतु पृथ्वी की 70 से अधिक संपदा का 20 जनसंख्या द्वारा उपभोग किया जाता है जो अमीर देशों में निवास करती है और विश्व के 70 से भी ज्यादा प्रदूषण में योगदान देती है।

बढ़ती आबादी का खाद्यान्न, शिक्षा तथा रोजगार पर कुप्रभाव

हमारे आर्थिक स्त्रोत और माल का उत्पादन उस गति से नहीं बढ़ता जिस गति से आबादी बढ़ती है। आबादी गुणा (Multiplication) के अनुपात में बढ़ती है जबकि वस्तुओं का उत्पादन जोड़ (addition) की विधि से वृद्धि को प्राप्त होता है इसलिए आबादी के अनुपात से मकान, दुकान, रोजगार या शिक्षा-संस्थानों की व्यवस्था नहीं की जा सकती। सन् 1975 में रोजगार के दफ्तरों के चालू रजिस्टरों में लगभग 87 लाख लोगों के नाम दर्ज थे। आश्चर्य तो यह है कि इनमें से लगभग 41 लाख उच्च शिक्षा प्राप्त थे। यह तो शहरों की स्थिति है, गांव के जो करोड़ों लोग किसी रोज़गार दफ्तर में गये ही नहीं, उनकी तो कहानी ही अलग है। परंतु जिनका नाम एक बार रोजगार दफ्तर में दर्ज कराने के बाद उसका नवीनीकरण नहीं कराया, उनकी भी गिनती इनमें नहीं है। अन्न संकट के कारण, बच्चों को बेचने, तन बेचने और शरीर के अंग बेचने की घटनाओं से तो अखबार भरे पड़े हैं।

क्षेत्रफल और जनसंख्या का असंतुलन

हमारे देश में हर वर्ष जो वृद्धि होती है वह ऑस्ट्रेलिया की कुल आबादी के बराबर होती है जबकि ऑस्ट्रेलिया का क्षेत्रफल हमारे देश के क्षेत्रफल से दुगना है। दूसरे शब्दों में हम इस प्रकार भी समझ सकते हैं कि हमारे देश की आबादी सारे विश्व की आबादी का 17 है जबकि देश का क्षेत्रफल विश्व भूभाग का लगभग 2.45 मात्र ही है। इसमें भी विशेष शोचनीय बात यह है कि हमारे क्षेत्रफल का 50 बेकार है। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत भूमि और अधिक नर-नारियों का भार वहन नहीं कर सकती।

जनसंख्या वृद्धि और हिंसा

इन दिनों संसार में हिंसा की आग बड़ी तेजी से फैल रही है। हत्या, मारपीट, उपद्रव, दंगे, लूटमार और अपराधों में बड़ी तेजी से बाढ़ आ रही है। हिंसावृत्ति इतनी उग्र क्यों होती जा रही है? इस पर विभिन्न दृष्टियों से विचार और कई परीक्षण करने के बाद यह सिद्ध हुआ है कि जनसंख्या का दबाव मनुष्य को उथला, असहिष्णु और असंतुलित बना देता है। इसी कारण लोग जल्दी उत्तेजित हो जाते हैं। संख्या के दबाव का मनोवैज्ञानिक प्रभाव जांचने के लिए किये गये प्रयोगों में देखा गया कि छोटे-छोटे जानवर जब खुले और शांत वातावरण में रहते थे, तब उनकी प्रकृति बहुत शांत थी किंतु जब उन्हें भीड़भाड़ में रखा गया तो वे अत्यंत ही उत्तेजित और थके मांदे रहने लगे और उनमें एक-दूसरे पर आक्रमण करने की प्रवृत्ति भी पनपती देखी गई। सर्वविदित है कि भीड़भाड़ के कारण मलमूत्र, पसीना तथा रद्दी चीज़ों की गंदगी भी बढ़ती है और शरीर से निकलने वाली उष्मा भी अपने निकटवर्ती वातावरण को प्रभावित करती है। मनोशास्त्रियों के अनुसार ये विकृतियाँ ही प्राणियों को उत्तेजित करती हैं। यही कारण है कि छोटे-छोटे गांवों की अपेक्षा कस्बों में तथा कस्बों की अपेक्षा शहरों में अधिक अपराध होते हैं। हत्याओं और आत्महत्याओं का अनुपात भी इन्हीं कारणों से सघन आबादी वाले क्षेत्रों में अधिक पाया गया है।

जनसंख्या और पर्यावरण

पृथ्वी के 70 हिस्से में जल है। इसमें से 67 हिस्सा समुद्र का है। समुद्र का यह पानी न तो पीने योग्य होता है, न कल-कारखानों और न कृषि-उद्योगों के लिए ही उपयुक्त है। दो प्रतिशत जल बर्फ के रूप में उत्तरी दक्षिणी ध्रुवों तथा ऊँचे पर्वतों की चोटियों पर जमा रहता है। एक

प्रतिशत जल ही ऐसा होता है जो खेती-जंगल, उद्योग-धंधों तथा पीने के काम में लाया जा सकता है। बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिए स्वच्छ जल उपलब्ध कराना दुरूह होता जा रहा है। जनसंख्या वृद्धि के कारण कल-कारखानों की संख्या भी दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। एक लीटर पेट्रोल बनाने के लिए दस लीटर पानी फूंकना पड़ता है। एक किलो सब्जी पर 40 लीटर, 1 किलो कागज़ के लिए 100 लीटर तथा एक टन सीमेंट के लिए 3500 लीटर पानी जलाना पड़ता है। कारखानों के उत्सर्जित पदार्थ भी पानी में फेंके जाते हैं जिससे उपलब्ध जलस्त्रोत भी विषाक्त हो जाते हैं। इन दिनों अमेरिका के कई झील-झरने जो कभी अपनी सुंदरता के कारण प्रकृति प्रेमियों का जी ललचाते थे, अपना आकर्षण खो बैठे हैं। गंगा-यमुना आदि नदियाँ भी गंदगी बहाने वाली गटर मात्र रह गई हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या की सुविधाओं के लिए रेल-मोटरों की भी बाढ़ आई है और इनके द्वारा जो धुआँ हवा में घोला जाता है, वह भी निकट भविष्य में भारी विपत्ति बनकर बरसने वाला है। यह भी आशंका व्यक्त की जा रही है कि वायु में घुलते जा रहे ज़हर के प्रभाव से संभवत: सारी पृथ्वी ही भयंकर रूप से गर्म होकर जल जाये अथवा उस पर रहने वाले प्राणी घुट-घुट कर मरें। बढ़ता हुआ कोलाहल, नशों का अंधाधुंध प्रयोग, रासायनिक खाद, कीटमारक छिड़काव आदि के फलस्वरूप मनुष्य की जीवन शक्ति दिनों दिन घट रही है। इस प्रकार अनेकों अन्य भी समस्यायें हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जनसंख्या की भयावह वृद्धि से जुड़ी हैं जैसे जंगलों का अंधाधुंध कटाव, सूर्य के ताप में वृद्धि, अपराधवृत्ति की वृद्धि, नैतिक और सांस्कृतिक पतन, टूटते परिवार, असुरक्षित बचपन और वृद्धावस्था, नारी शोषण, मूल्यों में गिरावट आदि-आदि। ऐसा देखने में आता है कि विचारशील व्यक्ति, जनमानस को सीमित संतानोत्पत्ति के लिए तरह-तरह से समझाते रहे हैं परंतु इनका प्रभावशाली परिणाम न देख जैसे प्रकृति ही अपना कुल्हाड़ा तेज करने को बाध्य हो गई है।

जनसंख्या-वृद्धि नियंत्रण

सरकार संतति निरोध के लिए लोगों को कृत्रिम साधन तथा डॉक्टरी सुविधायें देती हैं और उसके लिए वह परिवार नियोजन केन्द्रों, डॉक्टरों तथा कृत्रिम प्रसाधनों पर करोड़ों रुपये भी खर्च करती है। परंतु भारत देश आध्यात्मिक देश है, इसमें उच्च कोटि के संत और विचारक हुए हैं। उनके विचार भी इस विषय में जानने और धारण करने योग्य हैं। उदाहरण के लिए, महात्मा गांधी, सन्त विनोबा भावे आदि मनीषियों का कहना है कि कृत्रिम साधनों को अपनाने से यद्यपि संतति निरोध हो सकता है तथापि इससे हमारे देश के लोग निस्तेज होते हैं। उनमें वासना और भी प्रबल होती है क्योंकि अब वे संतान की उत्पत्ति और उससे बढ़ने वाली जिम्मेवारी से अपने को सुरक्षित अनुभव करते हुए, विषय भोग को सुख का साधन मानकर उसकी ओर और भी ज्यादा प्रवृत्त होते हैं। सही समाधान तो ब्रह्मचर्य की पालना में ही है।

अन्य अनेक धर्मस्थापकों, भक्तों आदि ने भी ब्रह्मचर्य को जीवन में धारण कर जनसंख्या नियंत्रण और मानव उत्थान में इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय पिछले 75 वर्षों से पवित्रता की शक्ति के अनगिनत सफल प्रयोग पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में कर रहा है। यहाँ पर मिलने वाली परमपिता परमात्मा शिव की सत्य शिक्षाओं के आधार पर हमारा यह सुझाव और विनम्र निवेदन है कि सरकार परिवार नियोजन पर जितना धन और जन-शक्ति खर्च कर रही है, उतना यदि ब्रह्मचर्य के लाभों के बारे में लोगों को शिक्षित करने में खर्च करे तो देश का निश्चित ही कल्याण हो सकता है। आज ब्रह्मचर्य को एक सामाजिक आवश्यकता मानने की जरूरत है। ❖

योग का प्रयोग

● डॉ.अनीता कुमार, सिलवासा

अहमदाबाद-बड़ौदा एक्सप्रेस हाइवे पर आणंद के पास 24 दिसंबर, 2009 को हमारी कार की ट्रक से सड़क दुर्घटना हुई। मैं कार में आगे की सीट पर बैठी थी, उसी ओर ट्रक का पिछला हिस्सा टकराया और कुछ क्षणों के बीत जाने के पश्चात् मैंने स्वयं को खून से लथपथ पाया। अपने परिजनों और ड्राइवर को सही-सलामत देखकर मैंने मन ही मन बाबा को धन्यवाद दिया।

बाबा को धन्यवाद

अस्पताल में इलाज के दौरान मुझे पता चला कि मेरे सिर पर लगभग 22 टाँके आए हैं। मेरा हाथ जो लगभग 10-12 इंच लंबा कट गया था, उसमें भी 25-30 टाँके आए हैं और पैर में तथा सिर के कुछ अन्य हिस्सों में अंदरूनी चोटें आई हैं। अपने घावों को देखकर मैंने पुन: बाबा को धन्यवाद दिया कि इस सड़क दुर्घटना में बाबा ने मेरी जान बचा दी।

स्नेह-दृष्टि द्वारा सकाश

इलाज के पश्चात् मैं सिलवासा अपने घर पहुँची। सिलवासा शाखा की निमित्त बहन के साथ सेन्टर की बहनों ने मिलकर मुझे स्नेह-दृष्टि द्वारा सकाश दी। अगले ही दिन से सभी बी.के.भाई-बहनों ने मेरा हाल-चाल पूछने के साथ-साथ मेरे शीघ्र स्वस्थ होने की कामना करते हुए संगठित रूप से मुझे सकाश दी। ईश्वरीय परिवार की स्नेहमयी दृष्टि पाकर मैं स्वयं को बहुत भाग्यशाली अनुभव कर रही थी। योग के द्वारा विशेष बल भरने के लिए उन्होंने मुझे सेन्टर पर आमंत्रित किया।

पीड़ा कम होने लगी

जब मैं सेन्टर पर गई तो सभी बी.के.भाई-बहनें गोलाकार स्थिति में बैठ गए और मुझे बीच में बैठने को कहा। निमित्त ब्रह्माकुमार भाई ने मुझ पर योग का प्रयोग करने हेतु कॉमेन्ट्री से योग कराना आरंभ किया। योग की प्रक्रिया द्वारा वहाँ बैठे सभी भाई-बहनों ने बाबा से शक्तियों की किरणों का संचार मुझ पर किया और स्वयं बापदादा ने मेरे जख्मों को ठीक करने के लिए सकाश दी। उससे मुझे अद्भुत शक्तियों के संचार की अनुभूति होने लगी, साथ-साथ मेरे शरीर की पीड़ा भी कम होने लगी।

दुर्घटना का मेरे मन पर भी बुरा प्रभाव पड़ा था। अनेक नकारात्मक विचार भी आते थे जैसे, कहीं कुछ अनर्थ हो जाता तो? परिवार के किसी सदस्य को कुछ हो जाता तो? धीरे-धीरे मुझे यह भी लगने लगा था कि मेरी याद्दाश्त भी कमज़ोर होती जा रही है, अजीब-सा सूनापन, अजीब-सा मौन मुझमें व्याप्त होने लगा है, मुझमें कुछ सोचने, समझने की क्षमता समाप्त होती जा रही है और एक अनजाना भय मन में समाता जा रहा है कि कहीं सिर पर लगी भयानक चोट के कारण तो उपरोक्त बातें नहीं हो रही हैं।

नकारात्मकता में कमी

इसी कशमकश में जब मैं 'सकाश ग्रुप' के बीच में बैठ कॉमेन्ट्री योग करती तो मुझे अनुभूति होती कि ऐसा कुछ नहीं होगा, मैं पूर्ण रूप से स्वस्थ हो जाऊँगी। इतनी महान आत्माओं द्वारा बाबा से किरणें लेकर मुझ पर प्रयोगात्मक विधि से डाली जा रही हैं और स्वयं बापदादा मेरे सिर पर हाथ रखकर वरदानों की वर्षा कर रहे हैं तो मुझे किस बात की चिन्ता? नकारात्मक चिन्तन धीरे-धीरे कम होने लगा और शरीर

(शेष..पृष्ठ 29 पर)

सर्वश्रेष्ठ सत्ता – आध्यात्मिक सत्ता

● ब्रह्माकुमारी शकुंतला, डिगावा मण्डी

आज समाज में राजनैतिक सत्ता, विज्ञान की सत्ता और धार्मिक सत्ता का बहुत बोलबाला है। आम आदमी इन तीनों से ही विश्व परिवर्तन की आश लगाये बैठा है लेकिन इनकी अपनी स्थिति कैसी है –यह अवलोकन का विषय है।

राजनैतिक सत्ता

राजनीति अर्थात् राज्य कारोबार की नीति अर्थात् अन्य सब नीतियों की भी राजा। लेकिन आज यही नीति सबसे भ्रष्ट नीति बन गई है। 'राजनीति' शब्द नियम-कानून और मर्यादाएँ तोड़कर पैसा, पद व प्रतिष्ठा प्राप्त करने का पर्याय बन गया है। कई बार तो समाज की मुख्य धारा से विचलित या कहें कि समाज के लिए अनुपयोगी व्यक्ति राजनीति का सफल सिपाही बन जाता है। जिन कारनामों के लिए समाज में छूट नहीं, वही कारनामे राजनीति में सफलता के नुस्खे माने जाते हैं। कुल मिलाकर आज की राजनीति सिद्धांतहीन राजनीति है। राजनीति का घोड़ा, गाड़ी के अगाड़ी नहीं पर पिछाड़ी में चल रहा है।

जनसभाओं के लिए येन-केन प्रकारेण भीड़ जुटा ली जाती है। स्थिति यह है कि मतदाता किसी को भी अपना वोट देना नहीं चाहता। अगर किसी ने अपने प्रत्याशी को जिताया भी तो खुद को तो हारा हुआ और ठगा हुआ ही महसूस किया। अगर कोई विकास का कार्य कराना है या दो पक्षों में सुलह करानी है तो उसका उद्देश्य लोगों की भलाई या न्यायप्रियता न होकर 'वोट बैंक' होता है। मुझे इस वर्ग से भविष्य में अच्छे वोट मिल सकते हैं – इस वोट लोलुपता में न्याय-अन्याय की परवाह किये बिना कानून की धज्जियाँ उड़ाई जाती हैं।

विज्ञान की सत्ता

विज्ञान की नई-नई खोजों ने मानव को सुख के साधनों का इतना गुलाम बना दिया है कि वह इनके बिना स्वयं को अपाहिज महसूस करने लगता है। निस्संदेह विज्ञान ने चमत्कारिक कार्य किये हैं लेकिन उसने सुख-सुविधाओं के साधन देकर बदले में मानव की मानसिक स्वतंत्रता का हरण कर लिया है। मानवीय संवेदनाएँ व भावनायें प्राय: लुप्त होती जा रही हैं। नित नये संचार साधनों से दुनिया सिमटकर छोटी हो गई है। लग रहा है, गांव, शहर और देश एक-दूसरे के निकट आ गये हैं लेकिन दिलों की दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं। पड़ोसी के बीमार पड़ने पर घर बैठे ही मोबाइल से हालचाल पूछकर समय तो बचा लेते हैं लेकिन आपसी रिश्तों में स्नेह की डोर तो हाथ से छूट जाती है। इसी प्रकार से सुबह दूध आदि लाने के कार्य बाइक या कार से कुछ ही मिनटों में निपट जाते हैं लेकिन समय की यह बचत स्वास्थ्य व जेब पर भारी पड़ती है। उत्तरोत्तर विज्ञान विकासोन्मुखी से विनाशोन्मुखी बनता जा रहा है और निरन्तर विनाश रूपी सुरसा के मुख में जाता हुआ मनुष्य, सुरसा के मुख को महल समझ विजय मिश्रित हँसी हँस रहा है। विज्ञान के द्वारा पहले तो अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण करना फिर उनके भयावह परिणाम को देखते हुए निरस्त्रीकरण के समझौते करना या सीटीपीटी पर हस्ताक्षर करवाना – क्या यह समय, संपत्ति और शक्ति का दुरुपयोग नहीं और क्या यह विज्ञान की हार नहीं है? 'कलियुग में मानवता शून्य विज्ञान होगा' – यह सत्य स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

धर्मसत्ता

आज धर्म भी अपनी मूल परिभाषा खो चुका है और बाह्य आडंबरों, कर्मकांडों, रस्म-रिवाजों

व संकीर्ण मान्यताओं का पर्याय बन चुका है। धर्म से जुड़ने का दावा करने वाले लोग धर्म के अनुरूप आचरण नहीं करते। धर्म के मुख्य तीन लक्षण होते हैं – शान्ति, प्रेम और अहिंसा। आज इन तीनों के स्थान पर अशान्ति, वैर और हिंसा का बोलबाला है। लोग नास्तिक बनते जा रहे हैं। धर्म के नाम पर दुकानें खोलकर लोगों को ठगा जा रहा है। नैतिकता के रसातल में जाते स्तर को रोकने की शक्ति धर्म के पास नहीं रह गई है जबकि किसी भी क्षेत्र की अनैतिकता या गैर मर्यादा पर अंकुश लगाने का दायित्व धर्म का ही था। इसलिए शास्त्रों में कलियुग का मुख्य लक्षण 'धर्मग्लानि' कहा गया, राज्य ग्लानि या विज्ञान ग्लानि नहीं।

आध्यात्मिक सत्ता

धर्म और अध्यात्म में बहुत अन्तर है। आध्यात्मिकता मनुष्य आत्मा के मूल गुण, स्वभाव और संस्कार का नाम है इसलिए सार्वभौमिक सत्य होने के कारण उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम और सभी धर्मों के मनुष्यों को सहज स्वीकार्य होती है। उदाहरणार्थ, आत्मा का मूल धर्म शान्ति, प्रेम, पवित्रता है, यही विश्व की हर एक आत्मा की चाहना भी है इसलिए सभी को समान रूप से स्वीकार्य है। आत्मा अविनाशी होने के कारण ये गुण भी अविनाशी हैं। यदि हम दैहिक आधार पर सबको हिन्दू बनाना चाहें या मुसलमान या फिर ईसाई तो यह प्रत्येक को तो क्या अपितु एक को भी स्वीकार्य नहीं होगा।

एक अन्य उदाहरण, जो व्यक्ति इस जन्म में हिन्दू है, उसका धर्म परिस्थितियों प्रमाण इस जन्म में भी या अगले जन्म में भी बदल सकता है लेकिन शान्ति, प्रेम, पवित्रता, आनन्द, सुख आदि मूल गुणों की चाहना, परिस्थिति बदलने पर भी और जन्म-जन्मांतरों में भी समान रूप से बनी रहती है, वह कभी नहीं बदलती।

आध्यात्मिकता हमें सिखाती है कि किसी भी कर्म को करने से पहले हमें आत्मा का अधिक से अधिक अध्ययन कर लेना आवश्यक है। मसलन इस कर्म के संबंध में आत्मा की भावनाएँ, संवेदनाएँ क्या हैं? कर्म के बाद दुआयें मिलेंगी या बद्दुआयें, हम इस पहलू को भुलाकर केवल मौखिक वाह-वाही लूटने में राज़ी न हो जायें। वास्तविक जीत किसी का सिर झुकाने से नहीं, उसका दिल झुकाने से होती है। किसी भी क्षेत्र की कार्य-योजना में मनुष्यात्माओं की भावनाओं की अनदेखी का परिणाम घातक होता है। आखिर तो इस बाह्य (शरीर) के संचालन का कार्य भीतर वाले (आत्मा) के ही हाथ में है और भीतर वाले की मनोस्थिति जैसी होती है, वैसे ही कर्म वह कर्मेन्द्रियों से करा लेता है।

आध्यात्मिक सत्ता बाकी सब सत्ताओं को नियम व मर्यादाओं पर चलने का न केवल मार्ग दिखाती है अपितु चलने की शक्ति भी भरती है। साथ-साथ आध्यात्मिकता हमें कर्मगति का भी ज्ञान देती है इसलिए आध्यात्मिक प्रेमी व्यक्ति का, समाज या देश को किसी प्रकार से हानि पहुँचाने वाले कर्म पर अंकुश बना रहता है। आध्यात्मिकता मनुष्य को केवल एक-कालिक फायदे वाले कर्म नहीं अपितु सर्वकालिक फायदे वाले कर्म सिखलाती है।

अध्यात्म हमें यह भी सिखाता है कि हम सत्यता को अवश्य ही प्रकट करें – यह हमारा मौलिक अधिकार है लेकिन सत्यता जैसी सुन्दर अनमोल वस्तु को सभ्यता जैसे सुन्दर गिफ्ट पेपर में लपेटकर दूसरों के समक्ष रखें, अन्यथा असभ्यतापूर्वक प्रकट की गई सत्यता मूल्यविहीन होती है और अपमानित भी।

इसी प्रकार यदि कोई धर्म के

नाम पर भोली जनता को अल्पकाल की प्राप्तियों में उलझाकर सदाकाल की प्राप्तियों से वंचित रखता है तो कुछ समय तो धर्म-सत्ता का सुख मिल सकता है, सदाकाल का नहीं। सच्ची सफलता चरण चूमने से नहीं, आचरण बनाने में है।

कहा जाता है जो आदि में सो अंत में। आदिकाल में यही भारत विश्व का आध्यात्मिक गुरु था और अब अंत में इसे पुनः इसका खोया गौरव दिलाने के लिए परमपिता परमात्मा शिव अवतरित होकर इसे आध्यात्मिक रूप से सशक्त करने की सेवा पिछले 75 वर्षों से कर रहे हैं। वर्तमान संगमयुग के इस आध्यात्मिक सशक्तिकरण द्वारा ही आने वाली सतयुगी दुनिया में एक सत् धर्म और एक मर्यादा संपन्न राज्य स्थापित होगा। विज्ञान इतना उन्नत होगा कि उसके द्वारा सब सुख के साधन उपलब्ध होते भी, रिंचक भी विनाशकारी या दुखदायी प्रभाव नहीं होगा। ❖

हमने जग में क्या-क्या देखा

ब्र.कु.वीर बाला, लखनऊ

निराकार शिव ज्योतिर्मय को
हमने इन आँखों से देखा
उस विचित्र को चित्र रूप में
ब्रह्मा तन में आते देखा।
सुधर सलोना तन ब्रह्मा का
उसमें अति सुन्दर शिव बाबा
निराकार साकार मिलन का
संगम परम सुहाना देखा।
पापों की काली छाया से
जग में काला युग जब आया
अंधकार आवरण उठाकर
ज्ञान सूर्य को उगते देखा
हमने जग में.....
पावनता का मंत्र बताया
विषय विकारों से छुड़वाया
ज़हर जहाँ का पीने वाले,
नीलकंठ को हमने देखा
हमने जग में.....
दिव्य बुद्धि से, दिव्य दृष्टि से
कितने दृश्य मनोहर देखे
रास मगन सब गोप गोपियाँ
रास विहारी का रस देखा
हमने जग में.....
जन जीवन के काँटे बीने
दिव्य गुणों के फूल लगाये
दैवी युग की कलम लगाते
हमने जग माली को देखा
हमने जग में.....
लुप्त हो गई सभी कलायें
मानव कलाविहीन हो गया
कलातीत को कल्प अंत में
सोलह कला बनाते देखा
हमने जग में.....
डूब रही थी जग की नइया
सब पतवारें टूट चुकी थीं
भवसागर से पार लगाते
निष्काम माँझी को देखा
हमने जग में.....
मधुबन अपने बाबुल का घर
विधि विधाता दोनों बैठे
बाबा दादा मम्मा बच्चे
परमधाम धरती पर देखा
हमने जग में.....
मुरली के गहरे, गहन राज़ को
वीणा पाणी नित्य सुनाती
ब्रह्मा बाबा की प्यारी बेटी
सरस्वती मैया को देखा
हमने जग में.....
सिंह नाद-सी ज्ञान गर्जना
मन में जन कल्याण भरा था
असुर विनाशकारिणी माता
जगदंबा काली को देखा
हमने जग में.....
आदि रत्न साकार की रचना
वैजयंती माला के दाने
त्याग-तपस्या योग शक्ति से
सुमरन योग्य संवरते देखा
हमने जग में.....
अंत समय में परमेश्वर ने
परिवर्तन का शंख बजाया
पास खड़े होकर हमने
सारा इतिहास बनाते देखा
हमने जग में.....

पुरुषोत्तम संगमयुग और इस विश्व विद्यालय के नाम का रोचक इतिहास

● ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुंबई)

हम सब जानते हैं कि परमपिता शिव परमात्मा ने पिताश्री दादा लेखराज के तन में प्रवेश कर उन्हें अपना एडाप्टेड बच्चा बनाकर नया नाम 'प्रजापिता ब्रह्मा' दिया और उनके माध्यम द्वारा इस रुद्र ज्ञान यज्ञ की स्थापना की। इसके रोचक इतिहास के बारे में मैं जितना जानता हूँ, वह इस लेख में लिखता हूँ। बाकी सारी कहानी तो हमारी दादियाँ ही बता सकती हैं। दादियों से जो जानकारियाँ मुझे मिलेंगी, उनसे आपको आगे के लेखों में अवगत कराता रहूँगा। हम सब जानते हैं कि ब्रह्मा बाबा को दिव्य साक्षात्कार हुआ और उनके तन में परमपिता परमात्मा की प्रवेशता हुई और बाद में ब्रह्मा बाबा ने हैदराबाद सिंध में सत्संग की शुरूआत की। लोग आते गये और संख्या बढ़ती गई। पहले जशोदा भवन के 10' 10' के कमरे में सत्संग चला फिर आने वालों की संख्या बढ़ी तो पास के कमरे की दीवार निकाल दो कमरों का एक कमरा बनाया और वहाँ सत्संग चला फिर और संख्या बढ़ी तो पास के तीसरे कमरे की भी दीवार निकाल तीन का एक कमरा किया। जब वह स्थान भी छोटा पड़ने लगा तो बाबा ने जशोदा भवन के आंगन में मुरली चलाना शुरू किया।

यह सत्संग तो शुरू हुआ परंतु नाम फाइनल नहीं हो रहा था। लोगों ने इसे ओम मण्डली कहना शुरू किया क्योंकि यहाँ ओम की ध्वनि लगाई जाती थी और लोगों को साक्षात्कार होता था। सत्संग का विरोध होने लगा तो प्यारे ब्रह्मा बाबा ने एक युक्ति रची। उन्होंने आने वाले बहन-भाइयों को कहा कि वे अपने परिवार के बुजुर्गों से स्वीकृति पत्र लिखवाकर लायें। ब्रह्मा बाबा ने भी अपने हाथों से अपने बारे में स्वीकृति पत्र लिखकर दिया जो आज भी यज्ञ के पास प्रमाण रूप में आदरणीया ईशू दादी के पास है। ब्रह्मा बाबा ने यह स्वीकृति पत्र सिंधी में लिखा है जिसका मैं हिन्दी अनुवाद कर रहा हूँ –

'ओम मण्डली रूपी माता को प्रणाम! मैं छुट्टी से ओम मण्डली में ज्ञानामृत पीने और पिलाने अर्थ आता हूँ। मुझे छुट्टी देने वाले अनन्य शक्तियों को अच्छी तरह से सब जानते हैं – हस्ताक्षर, दादा लेखराज'

(18.01.1938)

इस प्रकार से स्वीकृति पत्र प्यारे ब्रह्मा बाबा ने सबसे लिखवाया। अपने परिवार से भी लिखवाया। खुद ने परिवार को स्वीकृति पत्र लिखकर दिया। यह स्वीकृति पत्र का इतिहास भी बड़ा रोचक है। बाद में आने वाले बहन-भाइयों के परिवार वालों ने कोर्ट में केस किया तब ब्रह्मा बाबा की ओर से वकील ने बुजुर्गों से मिले स्वीकृति पत्र दिखाये और सिद्ध किया कि जो भी आने वाले हैं, वे अपने परिवार के बड़ों की छुट्टी से आते हैं। यहाँ आने के लिए किसी पर जबर्दस्ती नहीं की जाती। केस में ब्रह्मा बाबा की जीत हुई। कुछ भाई-बहनें ऐसे भी थे जिनका स्वीकृति पत्र नहीं था और वे नाबालिग थे इस कारण उनको वापस भेजना पड़ा।

इस प्रकार इस स्वीकृति पत्र में ब्रह्मा बाबा ने अपने हाथों से लिखा है, 'मैं ओम मण्डली में ज्ञानामृत पीने और पिलाने अर्थ आता हूँ' अर्थात् ओम मण्डली नाम इस विश्व विद्यालय का प्रारंभ में पड़ा, यह इस स्वीकृति पत्र से सिद्ध होता है। बाबा ने जो कमेटी बनाई जिसकी अध्यक्षा मातेश्वरी जी को बनाया, उस कमेटी का नाम भी ओम मण्डली रखा। बाद में हम जानते हैं कि ओम मण्डली के ऊपर सरकार ने कुछ समय के लिए

थोड़ा-सा प्रतिबंध लगाया लेकिन आपस में सत्संग करने की स्वीकृति तो दी थी और इस प्रकार से यज्ञ आगे बढ़ता रहा।

बाद में शिवबाबा ने बहुत युक्ति से हम बच्चों को ज्ञान देना शुरू किया और उस समय की धार्मिक मान्यताओं के ऊपर धीरे-धीरे रोशनी डालकर हम बच्चों के जीवन में सच्चे ज्ञान का प्रारंभ किया। फिर 1 मई 1950 को यज्ञ पाकिस्तान से भारत में माउंट आबू में हस्तांतरित हुआ। ओखा बंदरगाह पर सामान ज्यादा था इसलिए चार बहन-भाइयों को ओखा में ही रुकना पड़ा और वे 4 मई को ट्रेन से माउंट आबू पहुँचे।

माउंट आबू को मुख्यालय के रूप में कैसे चुना गया, इसका भी अनूठा इतिहास है पर आज के इस लेख में तो मुझे विश्व विद्यालय के नाम के बारे में ही बताना है। बाद में शिवबाबा ने दादा लेखराज का नाम ब्रह्मा बाबा रखा और सभी बच्चों को ब्रह्मावत्स के रूप में पहचाना गया। इसी कारण बाबा ने ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय नाम प्रस्थापित करने का सोचा और अपनी मुरलियों में यह स्पष्ट किया कि यह रुद्र ज्ञान यज्ञ एक विश्वविद्यालय है। इसलिए इसे यूनिवर्सिटी के रूप में भी कहा जाये। बाबा ने सरकार से यूनिवर्सिटी शब्द का प्रयोग करने की अनुमति माँगी लेकिन स्वीकृति नहीं मिली। सरकार की तरफ से जवाब आया कि आप यूनिवर्सिटी शब्द का प्रयोग नहीं कर सकते परंतु विश्व विद्यालय शब्द का प्रयोग कर सकते हैं और तब से अपने नाम में परिवर्तन हुआ। शुरू में ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के नाम से सब पहचानने लगे। बाद में नाम में थोड़ा परिवर्तन हुआ और नाम में प्रजापिता शब्द जोड़ा गया। शुरू में कई जगह पर नाम में ब्रह्माकुमार और ब्रह्माकुमारी दोनों शब्द प्रयोग करते थे क्योंकि इस विश्व विद्यालय में बहन और भाई दोनों आते थे परंतु ब्रह्माकुमार, ब्रह्माकुमारी दोनों शब्द लिखने से नाम बहुत बड़ा हो जाता है इसलिए ब्रह्माकुमार शब्द निकाला गया और नाम प्रचलित हो गया – 'प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय'। उस समय तक इस विश्व विद्यालय के नाम अपनी कोई संपत्ति नहीं थी जिस कारण विश्व विद्यालय के नाम के संबंध में कभी कोई प्रश्न नहीं उठा। माउंट आबू स्थित पांडव भवन की संपत्ति भी दादा विश्वकिशोर अर्थात् भेरूमल टी.कृपलानी के नाम पर रजिस्टर्ड थी। दादा विश्व किशोर ने बहुत बार प्रयत्न किया कि यह पांडव भवन उनके नाम से हस्तांतरित कर संस्था के नाम पर या बहनों के नाम पर किया जाये परंतु ब्रह्मा बाबा ने स्वीकृति नहीं दी और पांडव भवन दादा विश्व किशोर के नाम पर ही रहा। जब दादा विश्वकिशोर का ऑप्रेशन नजदीक था तब जरूरत महसूस हुई कि पांडव भवन की संपत्ति का हस्तांतरण किया जाये और दादा विश्व किशोर ने मुझे हस्तांतरण के दस्तावेज बनाने को कहा। मेरे पास ऐसे कानूनी कागज़ बनाने का अनुभव नहीं था। फिर भी मैंने अपने मित्रों से राय-सलाह कर Release Deed बनवाया जिसके अंदर नाम लिखा 'प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय' और संस्था की तरफ से चार दादियों का नाम लिखा। इस प्रकार कागजात बनवाकर हम मुंबई से आबू आये। आबू में प्लेटफॉर्म पर हमें ब्रह्मा बाबा का पत्र मिला जिसमें लिखा था कि आप प्लेटफॉर्म पर ही स्नान कर लो और जो कागज़ रमेश ने बनाया है, उसे रजिस्टर्ड कराकर फिर ऊपर आओ। हम दोनों दस्तावेज के कागज़ लेकर आबू रोड पर स्टेम्प वाले के पास गये, उसे दिखाया। उसने कहा, दस्तावेज ठीक है, फिर उसने जितना कहा, उतने का स्टेम्प खरीद लिया और उन्हें टाइप करने को कहा। फिर हम दोनों पोस्ट ऑफिस गये। वहाँ से ब्रह्मा बाबा को फोन किया। दादा विश्व किशोर ने ब्रह्मा बाबा को कहा कि मैं समझता हूँ कि रमेश भाई ने जो डॉक्यूमेंट बनाया है, उसे आप देख लो फिर रजिस्टर करा देंगे। ब्रह्मा बाबा ने कहा, नहीं, आप दोनों वह कागज़ रजिस्टर कराकर ऊपर आओ। रमेश

भाई ने जो बनाया है, वह ठीक है। इस प्रकार डॉक्यूमेंट रजिस्टर हो गया और उसमें अपने विश्व विद्यालय का नाम प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के रूप में पहली बार कानूनी तौर पर प्रयोग हुआ। हमारा जो भी साहित्य छपने लगा, उसमें भी इसी नाम का प्रयोग होता रहा।

हम दोनों शाम को माउंट आबू गये और ब्रह्मा बाबा से मिले। ब्रह्मा बाबा ने एक नई बात दादा विश्व किशोर को कही कि यह डॉक्यूमेंट रमेश ने नहीं लिखा है, मैंने उनके द्वारा लिखवाया है। जब मैंने लिखवाया है तो मुझे दुबारा पढ़ने की क्या जरूरत है। इस प्रकार बाबा ने दादा के मन की शंका का निवारण किया और मुझे भविष्य के लिए कानूनी दस्तावेज बनाने का वरदान मिल गया।

सन् 1974 में भारत सरकार ने यूनिवर्सिटी शब्द का हिन्दी में भाषांतरण किया और 'विश्वविद्यालय' या 'विश्व-विद्यालय' शब्द किया। उसी आधार पर बाबा के इस विश्व विद्यालय को सरकार की तरफ से पत्र मिला कि आप इस विश्व विद्यालय शब्द का प्रयोग नहीं कर सकते, आप अपने नाम में परिवर्तन करें फिर हमने सरकार को पत्र लिखा कि सन् 1957 में आपने ही हमें विश्व विद्यालय शब्द को नाम में प्रयोग करने की स्वीकृति दी और उसी आधार पर हमने सब जगह अपने साहित्य, नेम प्लेट आदि में इसी नाम का प्रयोग किया है। फिर भी सरकार की तरफ से पत्र आने लगे और सरकार हमें मजबूर करने लगी कि इस विश्व विद्यालय शब्द का प्रयोग न करें। बाद में दिल्ली के एक बड़े वकील द्वारा भ्राता बृजमोहन जी ने सरकार को पत्र लिखा कि हम तो शुरू से ही विश्व और विद्यालय शब्द दोनों अलग-अलग लिखते हैं। हमने कभी भी 'विश्वविद्यालय' या 'विश्व-विद्यालय' शब्द का प्रयोग नहीं किया है। आपने जो भाषांतर किया है, उसमें विश्व और विद्यालय शब्द इकट्ठे हैं जबकि हम दोनों शब्दों का अलग-अलग इस्तेमाल करते हैं। इस प्रकार से हम जो विश्व विद्यालय शब्द प्रयोग करते, वह आपके द्वारा प्रमाणित हिन्दी भाषांतर शब्द नहीं है और इस आधार पर आप हमें विश्व विद्यालय शब्द का प्रयोग अपने नाम में करने के लिए मना नहीं कर सकते। वकील का यह बहुत अच्छा युक्तियुक्त पत्र था और यह भी बहुत अच्छी बात थी कि हम शुरू से ही विश्व विद्यालय शब्द लिखते थे। इस प्रकार वकील के उस पत्र के फलस्वरूप सरकार ने हमें विश्व विद्यालय शब्द अपने नाम में प्रयोग करने की स्वीकृति दी और इस प्रकार से इस रुद्र ज्ञान यज्ञ का नाम सरकार से मान्यता प्राप्त हो गया। दुनिया में लोग कहते हैं कि नाम में क्या रखा है परंतु हमारे विश्व विद्यालय में तो नाम का इतिहास रोचक है। कहाँ शुरू का ओम मण्डली नाम और बाद में कैसे नाम परिवर्तित हुआ। हमने सरकार को यह बात भी बताई कि इस विद्यालय में दुनिया के सभी विद्यालय आ जाते हैं। यह सारे विश्व का एकमात्र विद्यालय है जहाँ सारे विश्व के आदि-मध्य-अंत का ज्ञान मिलता है और आत्मा की उन्नति होती है। सरकार ने तीन शब्दों का भाषांतरण किया – स्कूल का विद्यालय, कॉलेज का महाविद्यालय तथा यूनिवर्सिटी का विश्वविद्यालय में। सरकार को हमने विश्वविद्यालय शब्द के बारे में ही पत्र लिखा था। ब्रह्मा बाबा का यह अरमान था कि यह विश्व विद्यालय अर्थात् पांडव गवर्मेन्ट दुनियावी गवर्मेन्ट में रजिस्टर्ड नहीं हो सकती। हम लोगों ने इसी आधार पर राजस्थान के चेरिटी कमिश्नर के पास एप्लीकेशन भी दिया कि इस विश्व विद्यालय को रजिस्टर्ड किया जाये परंतु पाली के सहायक चेरिटी कमिश्नर ने लिखित में ऑर्डर दिया कि आप ना तो सरकार से अनुदान (Grant) लेते हो और ना ही जनता से दान लेते हो इसलिए आपकी संस्था को रजिस्टर्ड नहीं किया जा सकता। हमने लिखत में भी यही दिया था कि हमारा दैवी परिवार है और जैसे लौकिक में कोई कमाता है तो कोई घर-बार चलाता है। इसी प्रकार से यह दैवी पारिवारिक

रूप है जिसमें ब्रह्मा बाबा हमारे अलौकिक पिता, मातेश्वरी अलौकिक माता तथा हम सब दैवी बहन-भाई हैं और इस प्रकार से दैवी परिवार के रूप में पैसे की लेन-देन होती है इसलिए इसे दान नहीं समझा जा सकता। इसलिए हम अपने एकाउंटस में दान शब्द का प्रयोग नहीं करते हैं परंतु बाबा की प्रेरणा के आधार पर स्वैच्छिक सहयोग (Voluntary Contribution) शब्द का प्रयोग करते हैं। (क्रमश :)

गरीब कौन ?

कहावत है, साधनहीन मनुष्य तो संपन्न बन सकता है लेकिन लालची व्यक्ति कभी तृप्त नहीं हो सकता। सबसे गरीब वही है जो अतृप्त है। जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने में मनुष्य सारी ज़िन्दगी दांव पर लगा देता है परंतु लक्ष्य तक पहुँचने के मार्ग और दिशा की विवेकपूर्ण जाँच अति आवश्यक है। बड़े-बड़े सम्राट दुनिया को जीतकर जो आनन्द प्राप्त नहीं कर सके, उस आनन्द को साधारण से साधारण व्यक्ति अपने विकार जीतकर प्राप्त कर सकता है।

एक संत को एक बार रास्ते में पड़ा धन मिल गया। उन्होंने निश्चय किया कि वे इस धन को उसे देंगे जो सबसे गरीब है। गरीब व्यक्ति की तलाश में वे घूमते रहे लेकिन उन्हें कोई ऐसा सुपात्र गरीब मिला ही नहीं जो कि रोज़ी-रोटी चलाने में सक्षम न हो। कई दिन बीत गये। एक दिन संत ने देखा, उनके आश्रम के आगे से अस्त्र-शस्त्रों से सजी विशाल रैली कूच कर रही है। रैली के साहूकार नेता ने संत को प्रणाम किया। संत ने पूछा, इतनी फौज लेकर कहाँ जा रहे हो? साहूकार ने कहा, महाराज, गांव में कुछ ज़मीन ऐसी पड़ी है जिसको हम अपने कब्ज़े में लेना चाहते हैं लेकिन गांव वालों ने देने से मना कर दिया है, इस फौज द्वारा वहाँ कब्ज़ा लेने जा रहे हैं। संत समझ गये कि इस साहूकार से अधिक गरीब व्यक्ति मिलने वाला नहीं है।

संत ने वह सारा धन साहूकार को अर्पित कर दिया और कहा, मैं गरीब व्यक्ति की तलाश में कई दिनों से था, आज वह तलाश पूरी हुई, तुम दुनिया में सबसे गरीब हो। साहूकार सुनकर अवाक् रह गया। उसे समझ में नहीं आया कि सबसे गरीब मैं कैसे हुआ।

संत ने कहा, तुम्हारे खज़ाने तो हीरे-जवाहरातों से भरे पड़े हैं, फिर भी यह फौज, अवैध तरीके से ज़मीन हथियाना, धन इकट्ठा करना, लोगों का खून बहाना, क्या ये अमीरी के लक्षण हैं? साहूकार की गर्दन झुक गई, वह शर्मिन्दा हुआ और संत की वाणी से, जीने की नई राह प्राप्त कर वापस लौट गया।

कहानी का सार यही है कि गरीब वही है जिसका मन गरीबी महसूस करता है, धन-साधनों की भरमार होते भी मन कहता है, ये तो कुछ नहीं, अभी और चाहिएँ। और मिल जाने पर फिर कहता है, और चाहिएँ। जो मिला है, उसका सुख भोगकर तृप्त होने का तो समय ही नहीं है। जो नहीं मिला, उसे किसी भी विकार का सहारा लेकर अपना बनाने की योजनाओं में ही समय लग रहा है, ऐसा व्यक्ति गरीबों से भी परम गरीब है। ऐसे गरीबों से हमारा निवेदन है कि अतृप्त जीवन को त्यागकर, तृप्त आत्मा बनने के लिए नज़दीकी ब्रह्माकुमारी सेवाकेन्द्र पर जाकर ज्ञान-धन एकत्रित करें। ज्ञान, गुण, शक्तियों के धन के अलावा अन्य कोई धन सदाकाल की तृप्ति दे ही नहीं सकता।

– ब्रह्माकुमार रामसिंह, रेवाड़ी

भ्रष्टाचार से मुक्ति

● ब्रह्माकुमार भूपाल, शान्तिवन

आज चारों तरफ आवाज़ उठ रहा है कि भ्रष्टाचार से मुक्ति हो। भ्रष्टाचार शब्द बना है भ्रष्ट + आचार से, जिसका अर्थ है आचरण का भ्रष्ट हो जाना। मानव के आचरण में जब आत्मिक स्नेह के बजाय काम विकार आ जाता है, शान्ति के स्थान पर क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो जाती है, मिल-बाँट कर जीवनयापन करने की जगह लालच और संग्रह की वृत्ति ले लेती है, सर्व का भला सोचने की जगह कुछ गिने-चुने लोगों के भले के लिए स्वार्थ की पट्टी आँखों पर बंध जाती है और नम्रता का स्थान अहंकार ले लेता है तो समझना चाहए कि वह श्रेष्ठ आचरण से गिरकर भ्रष्ट आचरण वाला हो गया।

लौकिक दुनिया में भ्रष्टाचार का अर्थ लिया जाता है धन-साधनों की बेईमानी से परंतु अध्यात्म में इसका अर्थ बड़ा विस्तृत है। **अध्यात्म कहता है, अपने को आत्मा समझने के बजाय, शरीर समझकर जो भी कर्म किये जाते हैं, वे सभी भ्रष्टाचारी कर्म हैं।** अपने को देह समझकर, दूसरे को देहदृष्टि से देखने से जाति, वर्ग, प्रांत, भाषा, लिंग आदि भेद पैदा होते हैं। इसी कारण अहम भाव या हीन भावना आती है। स्वार्थ, दिखावा, ईर्ष्या, बदले की भावना, नीचा दिखाने की भावना पैदा होती है। राग-द्वेष पैदा होते हैं।

प्रश्न उठता है कि हम शरीर नहीं हैं तो क्या हैं? अपने को शरीर नहीं समझें तो क्या समझें? इस प्रश्न के उत्तर में भी अध्यात्म कहता है कि शरीर तो पाँच तत्वों का आवरण मात्र है और पाँचों तत्वों में से किसी में भी बोलने, चलने, सोचने, समझने की शक्ति नहीं है। अत: **इस आवरण के भीतर, अति सूक्ष्म पर अति शक्तिशाली एक दिव्य शक्ति मौजूद है जो इतने भारी भरकम शरीर को चलाती है, उठाती है और इसके द्वारा सारे कर्मों को अंजाम देती है। इसीलिए हर व्यक्ति कहता है, मेरी आँख, मेरा मुख, मेरे हाथ-पैर आदि, कभी यह नहीं कहता, मैं आँख हूँ या मुख हूँ या हाथ या पैर हूँ। अगर यह छोटी-सी बात हम समझ जायें तो इस संसार में श्रेष्ठाचार आ सकता है।** हर व्यक्ति श्रेष्ठ बनकर सुखी, शांत और संपन्न बन सकता है। उसमें दैवी गुण आ जायेंगे और इस धरती पर जैसेकि स्वर्ग आ जायेगा।

जब किसी भी व्यक्ति की आत्मा निकल जाती है तो उसे कंधे पर ले जाते हैं। जो भी उसे देखता है, कहता है, अर्थी को ले जा रहे हैं अर्थात् रथी (आत्मा) के बिना रथ (शरीर) को ले जा रहे हैं। यह सब कहते हुए भी अज्ञानतावश अपने को आत्मा की जगह शरीर समझते हैं जबकि शरीर अलग है, आत्मा अलग है। ज्योतिबिन्दु स्वरूप आत्मा भ्रकुटि के मध्य विराजमान है।

मनुष्य अपने पूर्वज देवताओं के लिए गाते हैं, आप सर्वगुणसंपन्न, सोलह कला संपूर्ण, संपूर्ण निर्विकारी, श्रेष्ठाचारी हो क्योंकि उनमें पाँच विकार नहीं हैं। उनके समय के लिए गायन है, राम राजा, राम प्रजा, राम साहूकार है, जिये दाता, बसे नगरी, धर्म का उपकार है अर्थात् जिस राज्य में राजा भी राम, प्रजा भी राम और साहूकार भी राम है। मनुष्य स्वयं के लिए कहता है, हम निर्गुण हारे में कोई गुण नाही। कभी-कभी तो यह भी कहता है, हम पापी, नीच, विकारी, आप सर्वगुणसंपन्न। तो आप ही बतायें कैसे बनेंगे श्रेष्ठाचारी अर्थात् भ्रष्टाचारमुक्त।

भ्रष्टाचार से मुक्ति का साधन है ही भारत का प्राचीन सहज राजयोग

जो परमपिता परमात्मा के सिवाय कोई सिखला नहीं सकता। इसे वर्तमान संगमयुग के समय परमात्मा शिव बाबा अवतरित होकर प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के द्वारा सिखा रहे हैं। अगर हमें सच्चा-सच्चा श्रेष्ठाचारी बनना है अर्थात् खास भारत और आम सारी दुनिया को सच्चा स्वर्ग बनाना है तो आकर समझें। हम बदलेंगे तो जग बदलेगा। भ्रष्टाचार की महामारी केवल कानून से नहीं मिटेगी, कानून को भी मदद चाहिये। सभी दिल से प्रतिज्ञा करें कि हमें भ्रष्टाचारमुक्त बनना ही है। ❖

कमाल बैज की

सितंबर माह के पहले सप्ताह में जब मैं मधुबन में था, मुझे ईमेल मिला कि 14 सितंबर को आपका बैंगलोर स्थित एक बहुराष्ट्रीय कंपनी ईएमसी कार्पोरेशन में इंटरव्यू तय किया गया है। इंटरव्यू के पहले मैं लिखित परीक्षा के पहले राउण्ड में सफल हो चुका था। यह इंटरव्यू दूसरा राउण्ड था। इसके लिए मैं प्यारे बाबा से छुट्टी लेकर वापस बैंगलोर लौटा।

बाबा की श्रीमत अनुसार मैं शुरू से ही बैज तो लगाता था लेकिन अभिमानवश छोटा बैज शर्ट के बटन के पास लगाता था जिससे सर्विस की वृद्धि का कुछ प्रमाण दिखाई नहीं देता था। फिर मैंने बड़ा बैज लगाना शुरू किया जिसकी प्रेरणा मुझे हमारे वरिष्ठ भाइयों को देखकर मिली।

ईश्वरीय महावाक्यों में कहा गया है कि यह बैज बाबा की श्रीमत से बनवाये गये हैं इसलिए जहाँ भी जाएँ, बैज लगा रहे और कोई पूछे कि यह क्या है तो कहना कि जैसे वह मिलिट्री होती है ना वैसे ही हम भी रूहानी मिलिट्री हैं और भारत को फिर से स्वर्ग बनाने की सेवा में कार्यरत हैं। बस, इसी प्वाइंट को बुद्धि में रखकर मैं इंटरव्यू देने चल पड़ा।

जैसे ही हम सामने पहुँचे, इंटरव्यूअर अपनी कुर्सी से उठकर आये और बड़ी इज्जत देते हुए दरवाज़ा खोला। मैं आश्चर्यचकित हो गया क्योंकि ऐसा किसी कार्यालय में नहीं होता। वहाँ तो स्वयं ही दरवाज़े को खटखटा करके 'May I come in Sir' कहकर अंदर जाना होता है लेकिन यहाँ तो इतने बड़े व्यक्ति खुद उठकर दरवाज़ा खोलने आये। इसके बाद उन्होंने चाय-पानी के लिए पूछा और बैठने के लिए कहा। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे मैं इंटरव्यू देने वाला नहीं बल्कि ऊँच पद पर आसीन व्यक्ति हूँ और उन साहब से मीटिंग के लिए आया हूँ।

फिर इंटरव्यू की प्रक्रिया शुरू हुई। इंटरव्यूअर की नज़र मेरी छाती पर लगे शिव बाबा के ज्योतिबिन्दु चिन्ह वाले बैज पर पड़ी। वे सब बातें छोड़कर बैज और ब्रह्माकुमारीज़ की शिक्षाओं के बारे में पूछने लगे। वे ब्रह्माकुमारीज़ के ज्ञान से कुछ परिचित थे। आस्था चैनल पर प्रसारित होने वाले कार्यक्रम 'अवेकनिंग विद ब्रह्माकुमारीज़' को समय प्रति समय देखने के आधार पर उन्होंने करीब 15 से 20 मिनट तक राजयोग के बारे में ही जानकारी ली और सिर्फ दो प्रश्न हमारी लौकिक पढ़ाई के संबंध में पूछे। उन्हें राजयोग की जानकारी मिली और मुझे नौकरी मिल गई। मुझे वह पद मिला जिसमें मुझे रुचि थी।

इस तरह से बाबा का बैज न सिर्फ अलौकिक सेवा कराता है बल्कि लौकिक उन्नति भी कराता है। हर ब्रह्माकुमार बहन-भाई से निवेदन है कि वे चाहे डॉक्टर हों, इंजीनियर हों, स्कूल में हों या कॉलेज में पढ़ते हों, छोटा नहीं लेकिन बड़ा बैज लगाकर जाएँ जिससे सर्विस की वृद्धि भी होगी और हमारी उन्नति भी होगी। **– ब्रह्माकुमार शशांक, मण्डला**

सुनामी के सन्नाटे में राजयोग की आहट

● ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश, आबू पर्वत

मई, 2011 में मेरा विशेष ईश्वरीय सेवा यात्रा पर जापान और दक्षिण कोरिया जाना हुआ। यद्यपि यात्रा छोटी थी, लेकिन प्यारे बाबा ने मुझे बहुत अच्छे अनुभव कराये। मैंने देखा कि जापान में प्राकृतिक प्रकोप, भूकम्प, सुनामी आदि के कारण वातावरण भारी और नकारात्मक हो गया है। बच्चे, बड़े, व्यापारी, नौकरीशुदा, वृद्ध हरेक के मन में भय और भ्रम भरा हुआ है। चिंता की लकीरें उनके चेहरे पर साफ़ देखने में आती थीं।

जापान और कोरिया के अनेक शहरों में स्नेह-मिलन, पब्लिक कार्यक्रम, टॉक शो, रेडियो इण्टरव्यू आदि आयोजित हुए। मैंने अनुभव किया कि वहाँ की आत्माएँ आध्यात्मिक ज्ञान की प्यासी हैं। बाबा की बातें सुनते-सुनते जैसे कि वे भाव-विभोर हो जाते और आध्यात्मिकता का रसपान टकटकी लगाये करते रहते। हरेक स्थान पर कमेंट्री द्वारा योग भी कराया गया, जिसे सभी ने सराहा और उन्हें बहुत अच्छे अनुभव भी हुए। प्रत्येक कार्यक्रम के अंत में प्रश्नोत्तर भी होते थे। प्रस्तुत हैं कुछेक चुनिंदा प्रश्न और उनके उत्तर।

प्रश्न : टोक्यो में एक बुद्धिजीवी ने प्रश्न किया कि प्रकृति से तालमेल बनाने की विधि क्या है?

उत्तर : आधुनिक मानव एक ओर विकास कर रहा है, वहीं दूसरी ओर प्रकृति से दूर होता जा रहा है। हम प्रतिदिन कुछ क्षण निकाल कर प्रकृति को अच्छे प्रकंपन दें, उससे बातें करें, उससे निकटता बनायें। प्रकृति हमें बहुत कुछ सिखाती है जैसे धरती – धैर्य, जल – शीतलता, आकाश – विशालता, अग्नि – परिवर्तन शक्ति आदि। इन सब गुणों को जीवन में लाने से हम स्वत: ही प्रकृति के करीब आ जायेंगे। प्राकृतिक आपदाओं का एक बड़ा कारण मानव का नकारात्मक होना है और दूसरा कारण प्रकृति का अत्यन्त दोहन है। प्रकृति सुखदाई बने, इसके लिए हम प्रकृति से जितना लेते हैं उससे कई गुणा वापिस दें अर्थात् ज़्यादा-से-ज़्यादा वृक्ष लगायें, उनकी देखभाल करें। प्राकृतिक वस्तुओं का अधिक-से-अधिक प्रयोग करें और दूसरों को ऐसा करने के लिए प्रेरित करें।

प्रश्न : ओसाका में एक विद्यार्थी ने जानना चाहा कि हमारे स्कूल में, घर पर, समाज में हर जगह नकारात्मक वातावरण बना हुआ है, उससे कैसे मुक्ति मिले?

उत्तर : किसी भी घटना के दो पहलू हो सकते हैं – सकारात्मक और नकारात्मक। यह व्यक्ति विशेष पर निर्भर करता है कि वह उसे किस रूप में ले। यदि हमारी मानसिक स्थिति ऊँची हो तो बड़ी-से-बड़ी बात भी चुटकियों में गुज़र जाती है। इसके विपरीत, नकारात्मक अवस्था से छोटी-सी बात भी पहाड़ जैसी दिखती है। आवश्यकता अपने आपको संतुलित रखने, कर्मयोगी बन कर कर्म करने और नज़रिये को सकारात्मक बनाने की है। वृत्ति से वातावरण बनता है, जब हमारे चिंतन की धारा बदलती है तो स्वत: वायुमण्डल भी बदल जाता है।

प्रश्न : हीरोशिमा में एक व्यापारी ने प्रश्न किया कि प्राकृतिक आपदा के कारण हमारा कारोबार काफी मंदा हो गया है, जिसके कारण भविष्य की चिंता सताती रहती है। कृपया इससे मुक्ति की युक्ति बताएँ?

उत्तर : इस संसार में हर चीज़ एक चक्र के रूप में है। रात के बाद दिन ही आता है, सर्दी के बाद गर्मी आती है आदि-आदि। हमें व्यापार में आई कमी के कारण अपने मनोबल को नीचे नहीं करना चाहिए। आज नहीं तो कल, एक बार पुन: आपका कारोबार बुलंदियों पर जाना ही है। इस समय को अपने जीवन का परीक्षा काल समझ

कर चलते रहें, अपने कर्त्तव्य में कोई कोताही न बरतें और जीवन में मूल्यों को सदा साथ रखें तो अवश्य ही आपका व्यापार फिर अच्छा हो जायेगा।

दक्षिणी कोरिया (सियोल): 'आत्मा की आंतरिक शक्तियों की अनुभूति' विषय पर प्रवचन के बाद ब्र.कु. आत्मप्रकाश, ब्र.कु.मीरा बहन तथा अन्य समूह चित्र में।

प्रश्न : कोबे में एक महिला ने प्रश्न किया कि हमारे देश में हुई भारी तबाही और इतने लोगों की असमय मृत्यु से मेरे मन में हर समय भय व्याप्त रहता है, तनाव बना रहता है, जिसके कारण मैं अपने परिवार व बच्चों पर भी पूरा ध्यान नहीं दे पा रही हूँ, कृपया कोई उपाय सुझायें?

उत्तर : हरेक इंसान के जीवन में समस्याएँ आती रहती हैं। आज कोई भी व्यक्ति दावे के साथ नहीं कह सकता कि उसके पास कोई परेशानी नहीं है। यदि हम अपने दृष्टिकोण को वृहद् बनायें तो समझ सकेंगे कि इस बेहद के ड्रामा में घटित होने वाली हरेक घटना कोई-न-कोई अच्छा संदेश लेकर आती है। जिन्होंने शरीर त्याग दिया यदि हम उनके विषय में बुरा चिंतन करेंगे, रोयेंगे तो उन आत्माओं के पास हमारे नकारात्मक वायब्रेशन पहुँचेंगे, फलस्वरूप वे भी वहाँ परेशान होंगे। अत: हम सभी को शुभ संकल्पों का दान दें जिससे उन आत्माओं को भी शान्ति मिलेगी और हमारे मन में व्याप्त भय व टेंशन समाप्त हो जायेगा। कहने की ज़रूरत नहीं कि जब मेरा मन शान्त, शीतल होगा तो स्वत: मैं अपने परिजनों का पूरा ख्याल कर पाऊँगा।

भय का एक और कारण स्वयं को देह समझना है। यदि स्वयं को आत्मा समझेंगे तो हर प्रकार का भय दूर हो जायेगा। यह तो सनातन सत्य है कि आत्मा मरती नहीं और शरीर सदा रहता नहीं। ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की मूल शिक्षा ही यह है कि हम स्वयं को सदैव आत्म-अभिमानी अवस्था में रखें। इससे हर प्रकार का भय स्वत: खत्म हो जायेगा और तनाव को कम कर सकेंगे।

प्रश्न : टोक्यो में राजनेता ने पूछा कि राजनीति में बढ़ते भ्रष्टाचार से मुक्ति कैसे सम्भव है?

उत्तर : भ्रष्टाचार का प्रमुख कारण है लोभ वृत्ति। जब तक लोभ भावना मन में है, भ्रष्टाचार समाप्त नहीं हो सकता है क्योंकि लोभ, मानव को अधिक-से-अधिक संग्रह करने के लिए प्रेरित करता है, फलस्वरूप भ्रष्टाचार बढ़ता जाता है। इस सामाजिक बीमारी को खत्म करना है तो किसी-न-किसी को तो उदाहरण प्रस्तुत करना ही होगा। आज हरेक व्यक्ति दूसरे से बदलाव की अपेक्षा रखता है, लेकिन स्वयं को परिवर्तन नहीं करना चाहता है। अध्यात्म विज्ञान में हम कहते हैं कि स्व-परिवर्तन से विश्व-परिवर्तन। वास्तविकता तो यह है कि जो परिवर्तन हम दूसरों से चाहते हैं, वही स्व-जीवन में ले आयें तो वह दिन दूर नहीं जब न केवल राजनीति अपितु समाज, देश व दुनिया सभी बदल जायेंगे।

प्रश्न : फुकुयामा शहर में बैंककर्मी ने पूछा कि जॉब अनिश्चतता बढ़ रही है और प्रतियोगिता भी, ऐसे में राजयोग का क्या योगदान हो सकता है?

उत्तर : वर्तमान समय को अनिश्चतता और प्रतियोगिता के रूप में ही जाना जाता है और यह एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है। राजयोग का अभ्यास हमारे जीवन में हर प्रकार की योग्यता ले आता है। हम स्वयं को योग्य बनाते जायें, तन्मयता से कार्य करें, अपने वरिष्ठजनों के लिए सम्मान रखें तो ज़रूर हम राहत महसूस करेंगे और साथ ही उन्नति भी करते जायेंगे। ध्यान रखें, योग्य व्यक्तियों के लिए बेरोजगारी न थी, न है और न होगी। अत: स्वयं को योग्य और बहुआयामी बनायें।

प्रश्न : सियोल में एक बुजुर्ग ने पूछा कि मैं जीवन के अन्तिम सोपान में हूँ, ज़िंदगी में मैंने सब कुछ पा लिया है, अब राजयोग का मेरे लिए क्या महत्त्व है?

उत्तर : राजयोग आज की सर्व समस्याओं की अचूक औषधि है। प्रतिदिन योग अभ्यास करने से हमारी सोच में आमूल-चूल परिवर्तन आता है। योग से हमारा व्यवहार, नज़रिया, जीवन-शैली सब बदल जाते हैं। 'जैसा चिंतन, वैसा जीवन' के अनुसार योग द्वारा हम हर हाल में जीना सीख लेते हैं, हर समस्या से निपटना सीख लेते हैं, हर सम्बन्ध को निभाना सीख लेते हैं और हर क्षण का सदुपयोग करना सीख लेते हैं। भारत के सुप्रसिद्ध युवा-नेता स्वामी विवेकानंद जी ने कहा था कि मैंने अपने जीवन में अस्सी वर्ष के युवा और अट्ठारह वर्ष के वृद्ध देखे हैं। कहने का भाव यही है कि कोई भी आयु से बुजुर्ग नहीं होता अपितु बहुत कुछ उसकी सोच पर निर्भर करता है। राजयोग जीवन में हर पल नयापन लाने का जज़्बा पैदा करता है, हरेक क्षण को आनन्द से जीना सिखाता है।

प्रश्न : बुसान में एक बच्चे ने पूछा, आध्यात्मिकता और कैरियर का आपस में क्या सम्बन्ध है?

उत्तर : आध्यात्मिकता हमारा सम्पूर्ण विकास करती है तथा हमें दूरांदेशी बनाती है। मैं कितने ही ऐसे व्यक्तियों को जानता हूँ जिन्होंने बाल्यकाल में ही ब्रह्माकुमारी संस्था में प्रवेश किया। लौकिक शिक्षा के साथ-साथ राजयोग की शिक्षा भी ली और आज उनका व्यवसाय बुलंदियों को छू रहा है। इतने बड़े पद पर होने के बाद भी उनके अंदर अभिमान नहीं है, अभी भी वे सबको साथ लेकर चलते हैं और उन्होंने व्यक्तिगत जीवन और व्यवसायिक जीवन में अनूठा सामंजस्य बनाया हुआ है। इसलिए कहना न होगा कि आध्यात्मिकता और व्यवसाय का चोली-दामन का साथ है। ❖

योग का प्रयोग पृष्ठ 17 का शेष ..

की पीड़ा भी। शरीर के घाव भी शीघ्र भरते जा रहे थे। मुझ पर किये गए 11 दिनों के विशेष योग के प्रयोग से मैं शारीरिक और मानसिक दोनों रूप से स्वयं को स्वस्थ अनुभव करने लगी। इतने गहरे जख्म जो ठीक होने में लगभग एक माह से अधिक समय ले लेते, केवल 11 दिनों के अंदर ठीक हो जायेंगे, मैंने सोचा ही नहीं था।

सकाश ग्रुप को धन्यवाद

इन महान आत्माओं की शक्तिशाली दृष्टि से मेरे अंदर आत्मविश्वास तथा मनोबल बढ़ाने वाले बाबा के वरदानों से जीवन में पुन: उमंग-उत्साह आ गया। इस प्रकार, अकल्याण में भी कल्याण समाया हुआ है, यह बात मुझे महसूस हुई। अब मैं बाबा के साथ-साथ सकाश ग्रुप को भी हर पल धन्यवाद देती रहती हूँ। मुझ पर किया गया योग का प्रयोग सफल रहा है। वाह ड्रामा वाह! वाह मेरा भाग्य वाह! वाह मेरा बाबा वाह!

डॉ. विनोद कुमार (MBBS DGM FCR) वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी ने भी अपनी रिपोर्ट में तीव्रगति से सुधार का जिक्र करते हुए दवा के साथ-साथ योग के प्रयोग द्वारा मिली सफलता को स्वीकार किया है। ❖

तलाश पूरी हुई

● मधु , बैरागढ़ (भोपाल)

करीब दो-तीन वर्ष से अजीब तरह की समस्यायें मेरे साथ घट रही थीं जैसे कि बार-बार सोचना कि मुझे कुछ हो गया तो बच्चों का क्या होगा और हृदय की धड़कन अचानक बढ़ जाना। तनाव के कारण लगता था, दिमाग की नसें फट जायेंगी। स्वास्थ्य लगातार बिगड़ता जा रहा था। अनेक डॉक्टरों से संपर्क करने के बाद भी मेरी हालत में सुधार न के बराबर था।

श्वेत वस्त्रधारी बहन आई स्वप्न में

एक रात्रि को मैंने निर्णय लिया कि ऐसा कोई स्थान तलाशा जाये जहाँ शान्ति मिल सके और जीवन में कुछ सुधार हो सके। उसी सुबह (अमृतवेले) सफेद वस्त्र धारण किये हुए एक बहन स्वप्न में दिखाई दी। लगातार तीन दिन तक स्वप्न में मुझे वही बहन दिखाई देती रही। चौथे दिन सुबह मुझे पक्का अहसास हुआ कि घर के बिल्कुल सामने आश्रम में रहने वाली सफेद वस्त्रधारी हूबहू वही बहनें हैं जैसी कि मुझे स्वप्न में दिखाई देती हैं। हो न हो, भगवान ने मेरी मदद करने के लिए ही बहन को स्वप्न में भेजा है। ऐसा सोचकर मैं सुबह जल्दी तैयार होकर आश्रम पहुँच गई।

तनाव दूर करने का महामंत्र मिला

आश्रम में ब्रह्मा बाबा के चित्र के सामने बैठकर ऐसा अनुभव हुआ कि जिस शान्ति की आवश्यकता मुझे थी, वो यहाँ महसूस हो रही है। मैंने बहन जी से कहा, आप हमें ऐसा कोई मंत्र दे दीजिए जिससे तनाव खत्म हो जाये। बहन जी ने अगली सुबह आने को कहा। अगली सुबह मैं आश्रम गई तो एक ब्रह्माकुमार भाई ने सात दिवसीय कोर्स का प्रथम अध्याय मुझे समझाया। 'हम सभी आत्मा हैं, शरीर नहीं, शरीर वस्त्र है, सारी शक्तियाँ आत्मा में हैं, आत्मा भ्रकुटि सिंहासन पर विराजमान है' – यह सुनते ही खुशी का ठिकाना न रहा।

परमात्मा पिता का यथार्थ परिचय मिला

दूसरे दिन उन्होंने 'एक ओंकार', 'सतनाम', 'करता पुरख' परमात्मा शिव का परिचय दिया। बचपन में सिर्फ सुना था कि यह पोढ़ी पढ़ने मात्र से ही आपदायें दूर हो जाती हैं। आज उसी प्यारे परमात्मा का यथार्थ परिचय मिल गया। सात दिन का कोर्स हो गया। ऐसा लग रहा था मानो किसी ने मुझे पंख लगा दिये हैं। मेरी तलाश पूरी हो गई। फिर तो रोज़ सवेरे ईश्वरीय महावाक्य सुनने जाने लगी। आश्रम के बहन-भाइयों का स्नेह और अपनत्व देखकर मेरी आँखों में आँसू आने लगते थे। आज कहीं, कोई, किसी से नि:स्वार्थ प्यार नहीं करता है, अवश्य ही यहाँ सबसे कुछ अलग है, जो मुझे खींच रहा है। कुछ ही समय में मुझे जीवन की वास्तविक परिभाषा समझ में आने लगी। मैंने प्रण कर लिया कि (1) जीवन पवित्र बनाऊँगी (2) सात्विक भोजन ही ग्रहण करूँगी (3) ऐसे पवित्र स्थान को कभी नहीं छोड़ूँगी, चाहे कोई भी बात सामने आ जाये।

आज जब मेरा जीवन परिवर्तन हो गया है तो सभी में परिवर्तन स्वयं ही हो रहा है। अब घर का वातावरण भी पवित्रता से भरपूर हो गया है। जब पीछे मुड़कर देखती हूँ तो समझ में आता है कि कहाँ दिन-भर तनाव में रहती थी, कोई भी अच्छा नहीं लगता था, वर्तमान सुरक्षित नहीं था, भविष्य अनिश्चित था, कुछ नहीं सूझता था परंतु आज मुझसे ज्यादा खुशी किसी के पास नहीं! अब तो दिल यही गाता है, प्यारे बाबा, आपने कमाल कर दिया, हमारा सारा जीवन आपने खुशहाल कर दिया। ❖

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन -307510, आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया। संयुक्त सम्पादिका - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन
E-mail : omshantipress@bkivv.org Ph. No. : (02974) - 228125 atamprakash@bkivv.org